क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु

महाप्रयाण

भाग-५

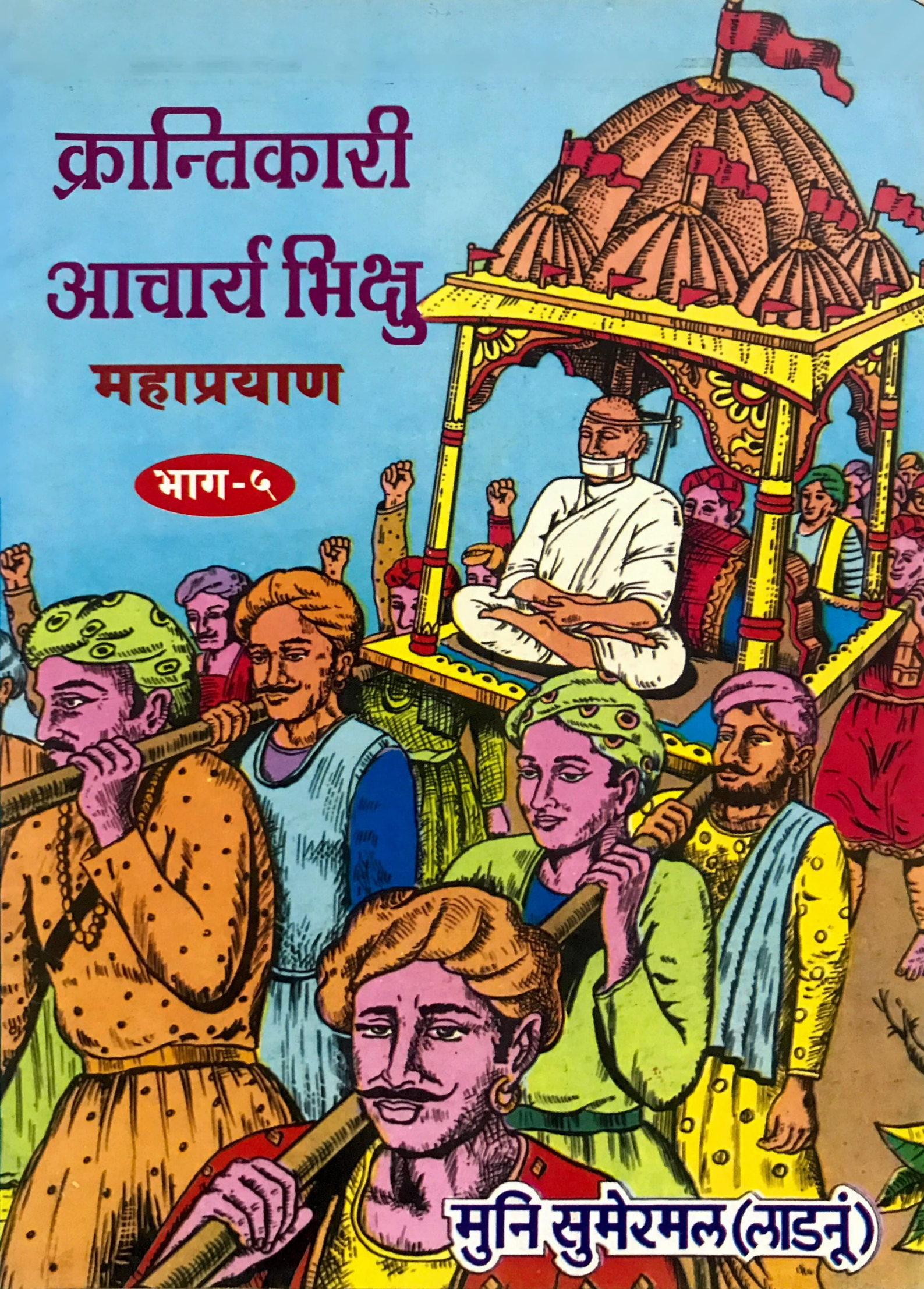

मुनि सुमेरमल (लाडनूं)

परिचय

आचार्य भिक्षु आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे । उनके पास जो कोई भी आता वह प्रभावित हुए बिना नहीं रहता । जहां निकटवर्ती लोग उनके प्रति आत्मीय आस्था रखते थे वहां प्रकट विरोध करने वाले यह लोहा मानते थे कि उन जैसा साधनाशील, शास्त्रज्ञ, कुशल प्रवक्ता, समझाने में पटु व कष्ट सहिष्णु साधु इस भरत क्षेत्र में नहीं है । उनको पूर्ण समर्पित व श्रद्धानिष्ठ साधु-साध्वियों व श्रावक-श्राविकाओं की एक सशक्त टीम मिली । द्वितीय आचार्य भारमल जी उनकी छाया की तरह थे । मुनि थिरपाल जी, फतेहचंद जी, हेमराज जी, खेतसी जी, बेणीराम जी, टोकर जी जैसे मुनि एवं श्री गेरुलाल जी व्यास, टीकम जी डोसी, विजयचंद जी पटवा जैसे श्रावकों का योग उन्हें मिला।

आचार्य भिक्षु का अंतिम चातुर्मास सिरियारी (पाली, राजस्थान) में हुआ । जैन धर्म के सर्वाधिक पवित्र 'संथारा' अनुष्ठान में उन्होंने पद्मासन में समाधि-मरण को प्राप्त किया । आचार्य भिक्षु ने साधना की लौ से अपने जीवन को आलोकित किया, हजारों लोगों को उन्होंने प्रकाश का पथ दिखाया । उनका नाम स्वयं में मंत्र है, उनका स्मरण विघ्नविनाशक है, उनका जप मंगलकारी है । तेरापंथ के चतुर्थ गणनायक श्रीमद् जयाचार्य के शब्दों में -

मुनि सुमेरमल (लाडनूं)

विघ्न हरण मंगल करण, स्वाम भिक्षु रो नाम ।
गुण ओलख सुमिरण करै, सरै अचिन्त्या काम ॥

प्रकाशक
मित्र परिषद्
115, ए चित्तरंजन एवेन्यु, कोलकाता - 700 073
फोन : 22352481, 22357935

मुख्य प्रवृत्तियां
- वातानुकूल प्रेक्षाध्यान केन्द्र
- होमियोपेथी व शिशु चिकित्सा केन्द्र
- अस्थि चिकित्सा केन्द्र
- सिलाई - बुनाई प्रशिक्षण केन्द्र
- समृद्ध पुस्तकालय
- विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति
- विशाल बर्तन भंडार
- असहायों को सहायता
- साहित्य सेवा

संपादक
मुनि उदितकुमार

संस्करण : द्वितीय
आचार्य भिक्षु निर्वाण द्विशताब्दी वर्ष

- अभिवन्दना कर्ता -
श्रीचन्द, उम्मेदसिंह, विजयसिंह मोहोनोत
(डीडवाना)
जयग्रुप ऑफ इन्डस्ट्रीज
नं 3 एवं 5, चार्ल्स केम्पबेल रोड़
कोक्स टॉउन, बेंगलोर-560 005
फोन : 25483508 / 25483908
मोबाईल : 98452 12363 / 98450 40099, 20099

मुद्रक :- श्रीं ऑफसेट प्रिन्टर्स, बेंगलोर-53. फोन : 5699 2695 मोबाईल : 98440 06655
श्रीनिवासा प्रिन्टर्स, बेंगलोर-53. फोन : 23356888

मूल्य : रु ३५/-

क्रांतिकारी आचार्य भिक्षु

तेरापंथ के द्वितीय आचार्य श्री भारमल जी आचार्य भिक्षु के आदर्श शिष्य थे, सफल उत्तराधिकारी थे। वे अपनी चर्या व अनुशासन के प्रति पूर्ण जागरुक थे।

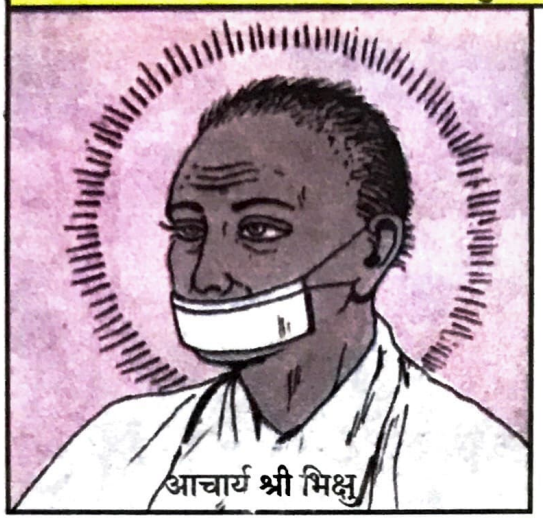

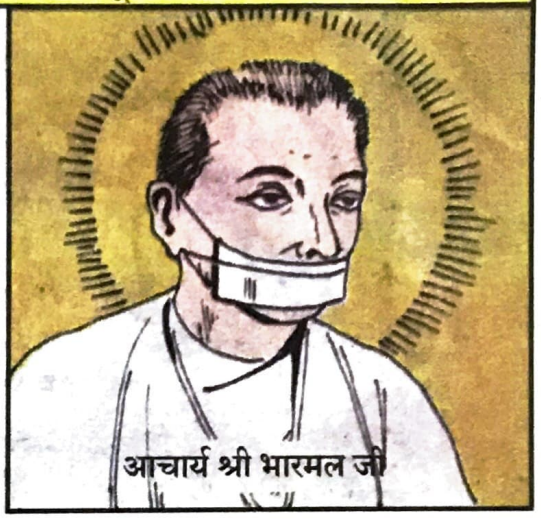

जब भारमल जी बालक थे, तब एक दिन आचार्य भिक्षु ने कहा -

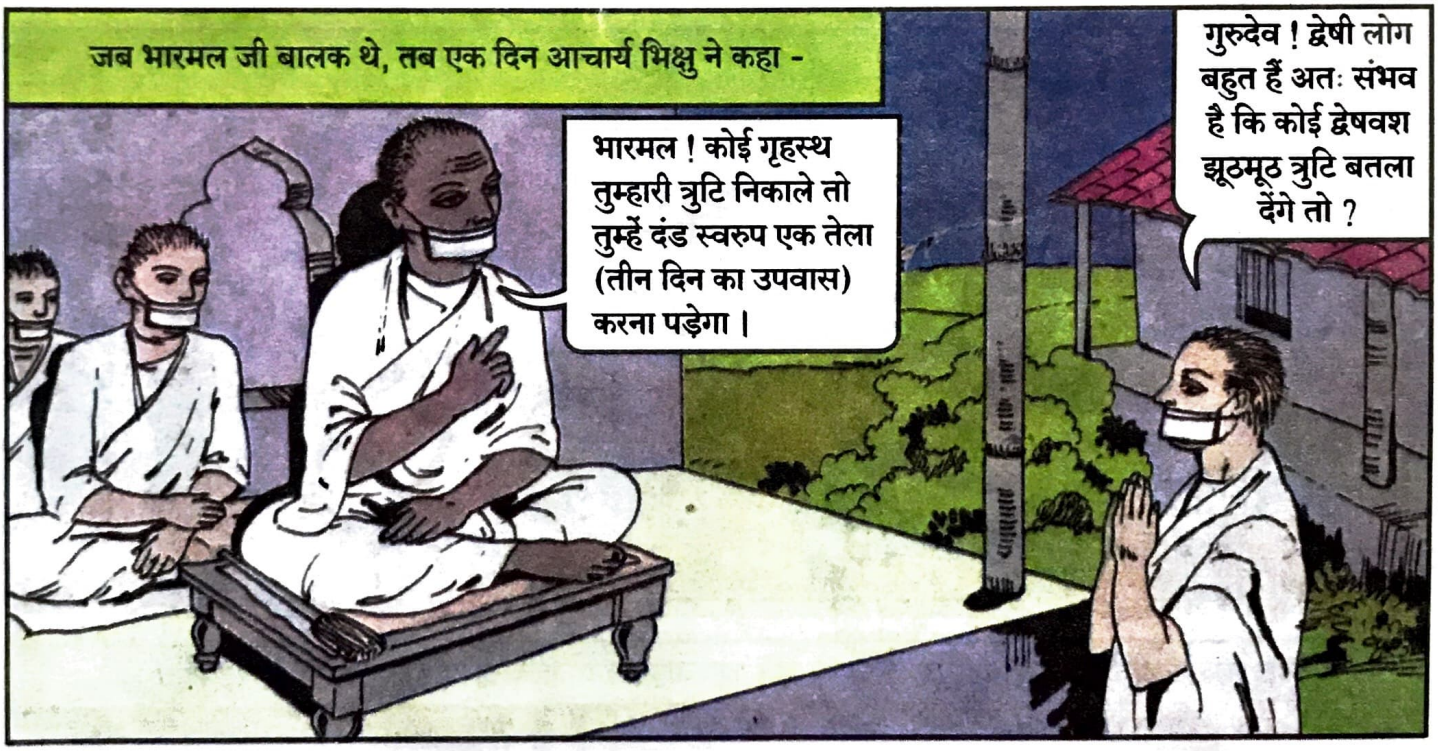

बिना किसी तर्क-वितर्क के मुनि भारमल ने गुरुदेव की आज्ञा को शिरोधार्य किया।

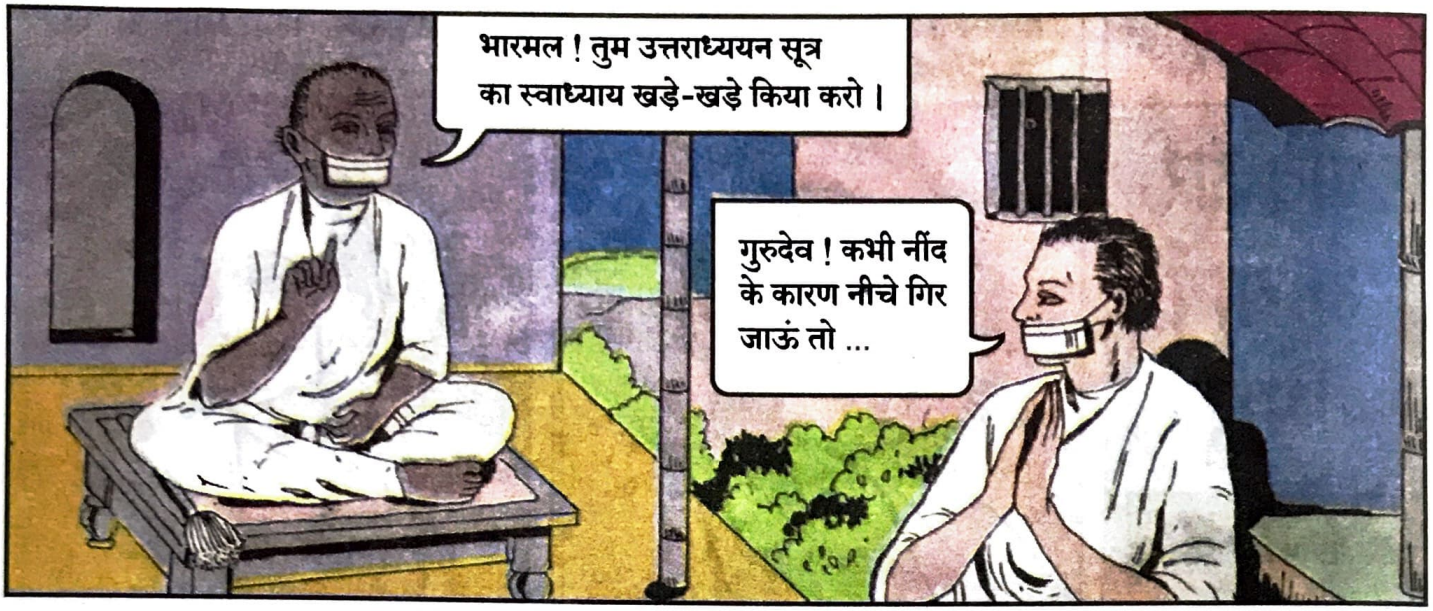
भारमल ! तुम उत्तराध्ययन सूत्र का स्वाध्याय खड़े-खड़े किया करो ।
गुरुदेव ! कभी नींद के कारण नीचे गिर जाऊं तो ...

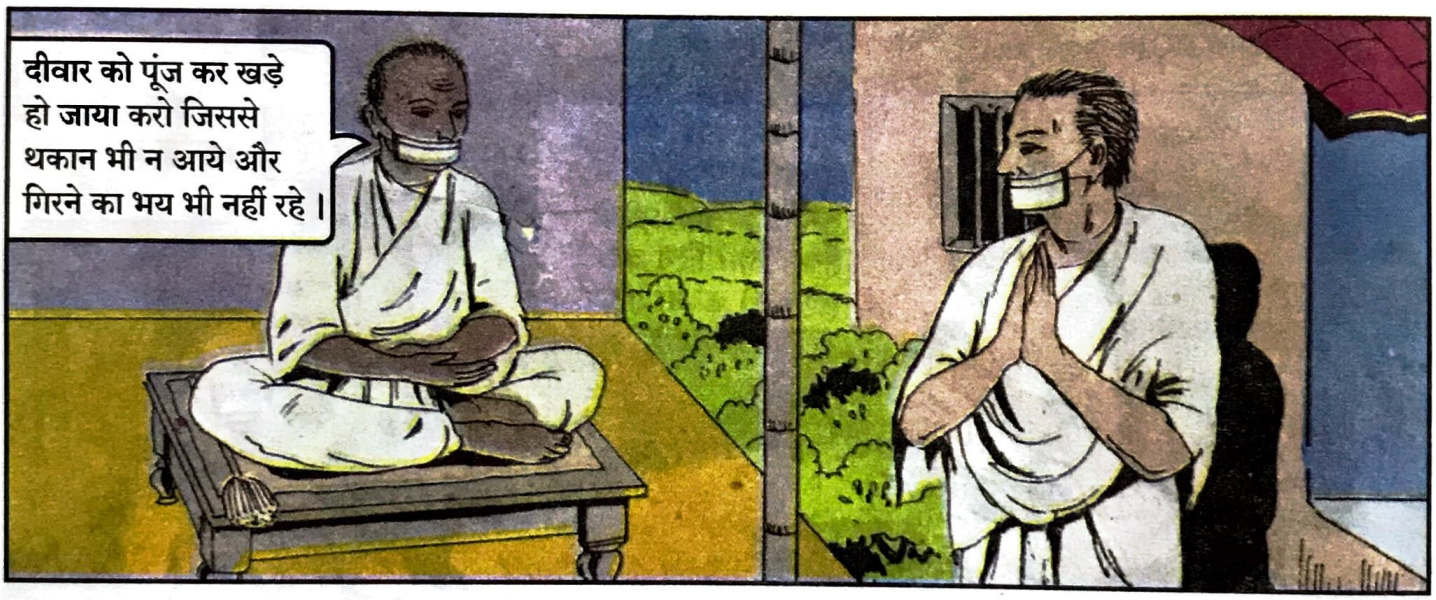
दीवार को पूंज कर खड़े हो जाया करो जिससे थकान भी न आये और गिरने का भय भी नहीं रहे ।

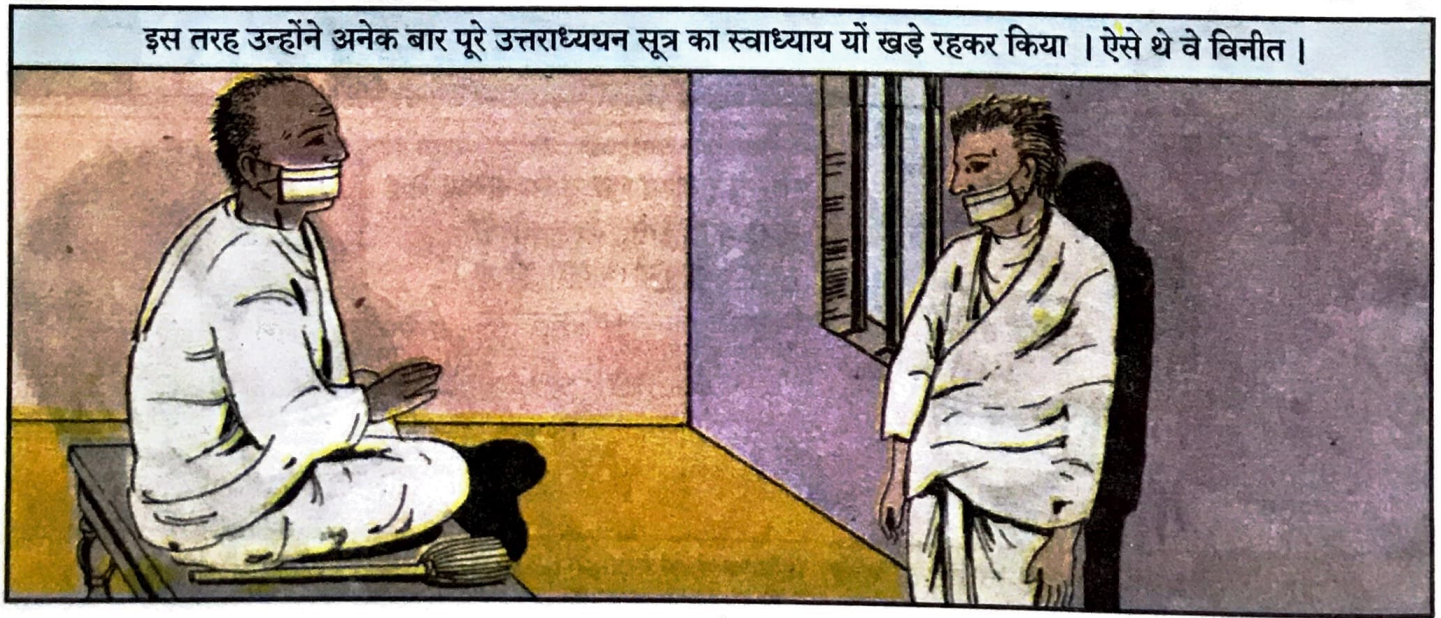
इस तरह उन्होंने अनेक बार पूरे उत्तराध्ययन सूत्र का स्वाध्याय यों खड़े रहकर किया । ऐसे थे वे विनीत ।

भारमल जी कुशल लिपिकार थे । इधर स्वामी जी रचना पूरी करते उधर दो-चार दिनों के अंतर से उनकी प्रतिलिपि कर लेते ।

भारमल जी आचार्य भिक्षु के समर्पित उत्तराधिकारी थे । वे स्वामी जी के साथ शुरु से ही समर्पित भाव से रहे ।

भारमल जी ने स्वामी जी का विश्वास कितना अर्जित किया वह उनके उन शब्दों से जाना जा सकता है जो उन्होंने अन्तिम समय में कहे थे -

मुनि खेतसी जी स्वामी जी के परम विनीत शिष्य थे । उनकी सं. १८३८ में दीक्षा हुई । दीक्षित होते ही आग्रह पूर्वक स्वामी जी के एक तरफ का वजन उन्होंने लिया ।

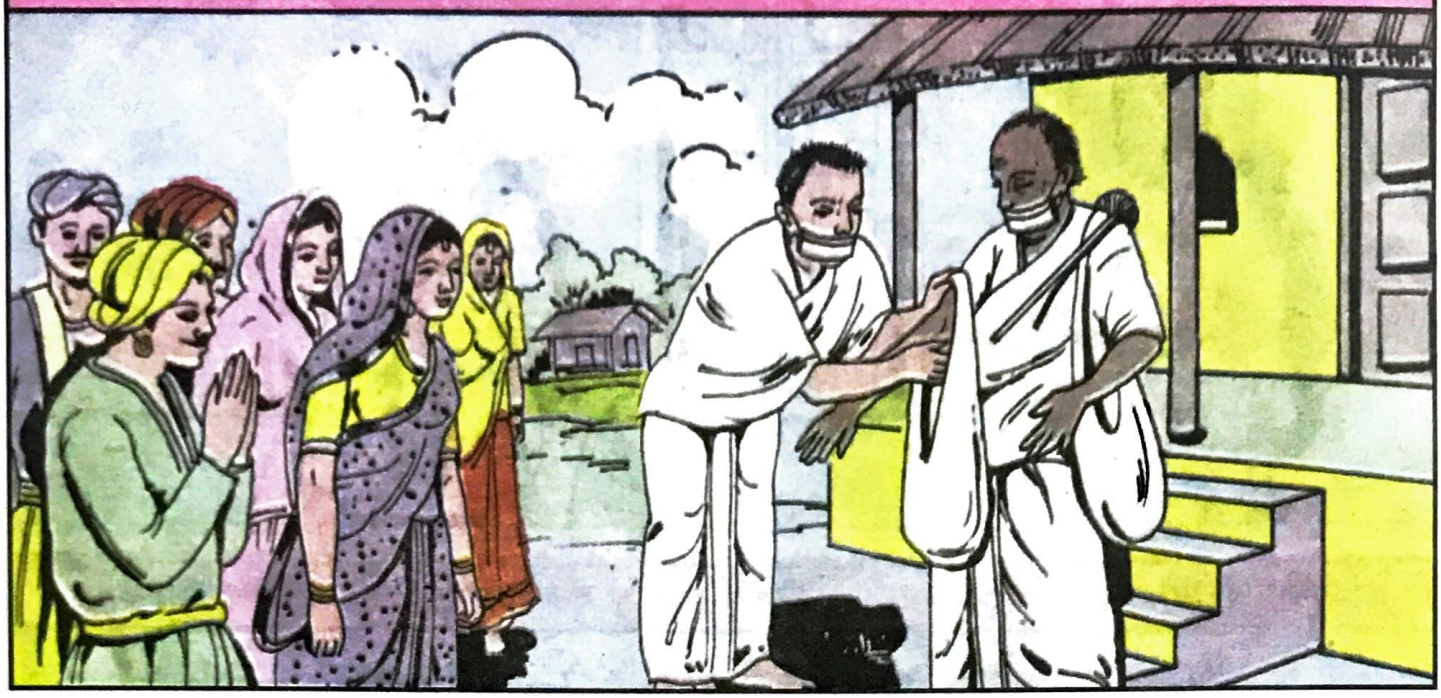

स्वामी जी जब कभी नाम लेकर पुकारते तो तत्काल उनके हाथ जुड़ जाते ।

* स्वीकृति सूचक शब्द ।

स्वामी जी के साथ छाया की तरह वे रहे ।

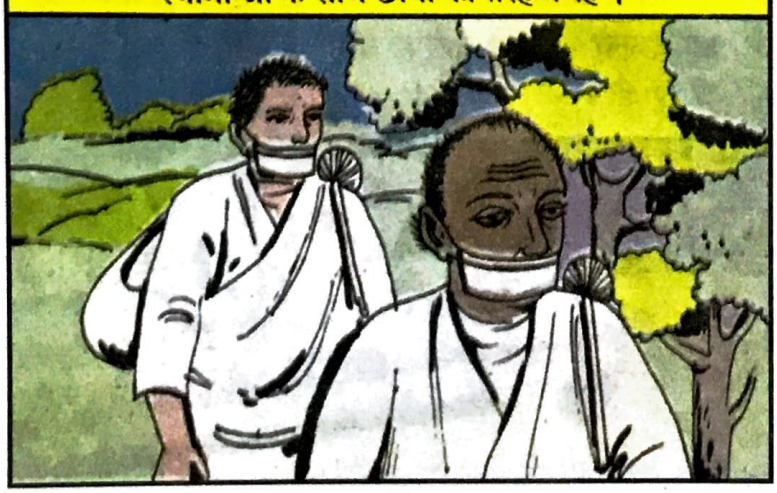

टोकर जी एक सेवाभावी संत थे । आचार्य भिक्षु उनकी सेवा से प्रसन्न थे ।

मुनि बेणीराम जी स्वामी जी के परम भक्त थे । उन्हें स्वामी जी का संपूर्ण अड़तीस हजार पद्य प्रमाण साहित्य कंठस्थ था । वे धर्म संघ के एक शहीद संत थे । बाल्यकाल में एक दिन उन्होंने स्वामी जी से पूछा -

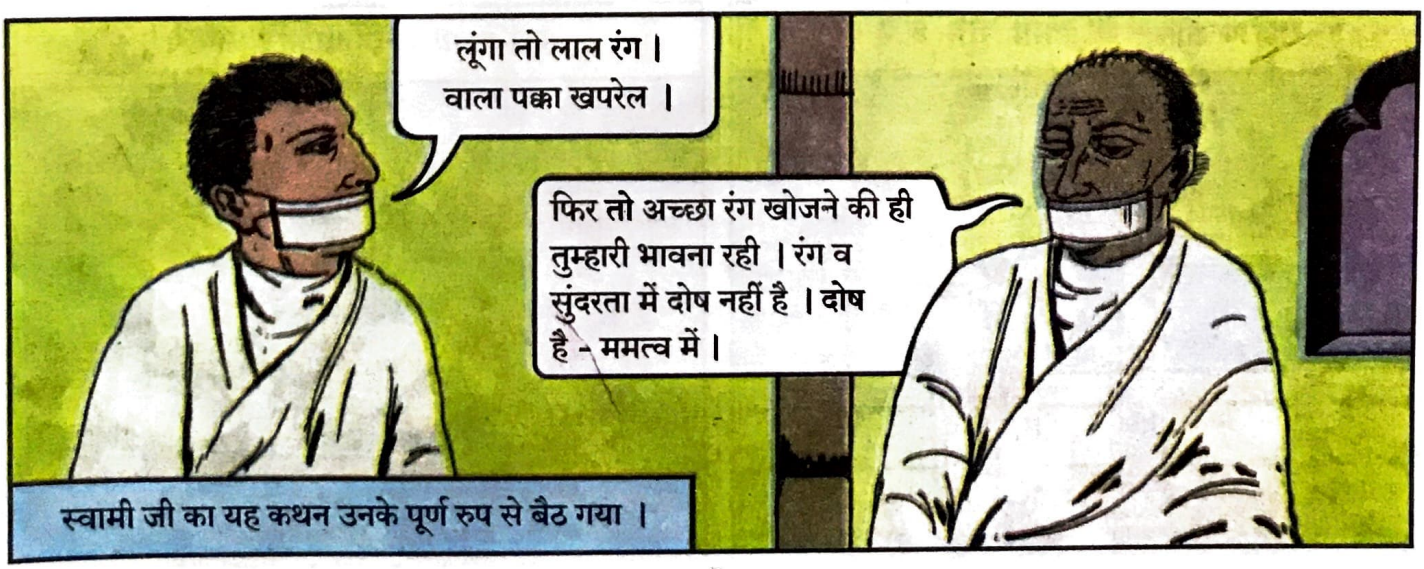

मुनि श्री हेमराज जी स्वामी जी के एक चर्चावादी व मेधावी शिष्य थे । जब वे गर्भ में आये तो उनकी माता ने 'देव विमान' का स्वप्न देखा । स्वप्न में ही माता पूछती है -

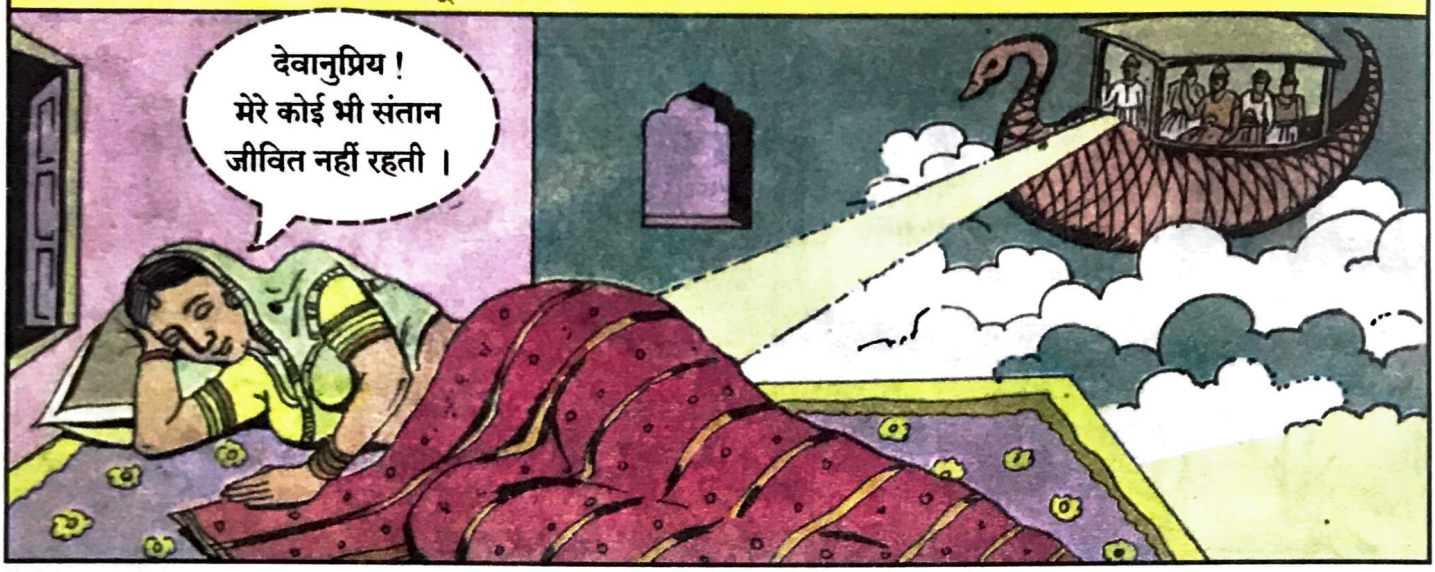

उन दो में एक हेमराज जी व दूसरी उनकी छोटी बहिन थी ।

हेमराज जी शुरु से ही त्याग वृत्ति के थे ।

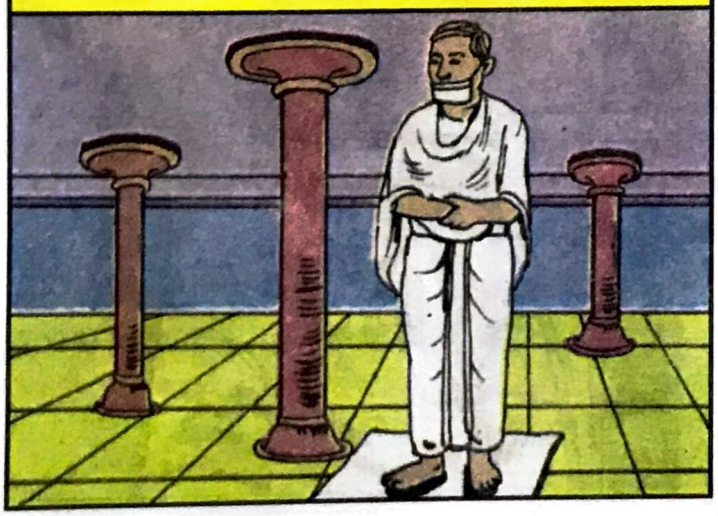

समय-समय पर व्याख्यान भी देते थे ।

राजस्थान के मांढ़ा-नींबली के मार्ग पर स्वामी जी जा रहे थे, वहां हेमराज जी को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा -

त्याग-संकल्प लेने के बाद वहीं खड़े-खड़े स्वामी जी ने हेम जी को गणित के क्रम से उपदेश दिया और उन्होंने स्वामी जी से यावज्जीवन अब्रह्मचर्य-सेवन का त्याग कर लिया । उसके बाद नींबली पधारे । वहां हेम जी के हाथ से कुछ भिक्षा ग्रहण की ।

भिक्षा ग्रहण करने के बाद युवाचार्य भारमल जी की ओर उन्मुख होते हुए स्वामी जी ने कहा -

सं. १८५३ माघ सुदी १३ को वट वृक्ष के नीचे हजारों नर-नारियों के बीच स्वामी जी ने हेम जी को दीक्षित किया ।

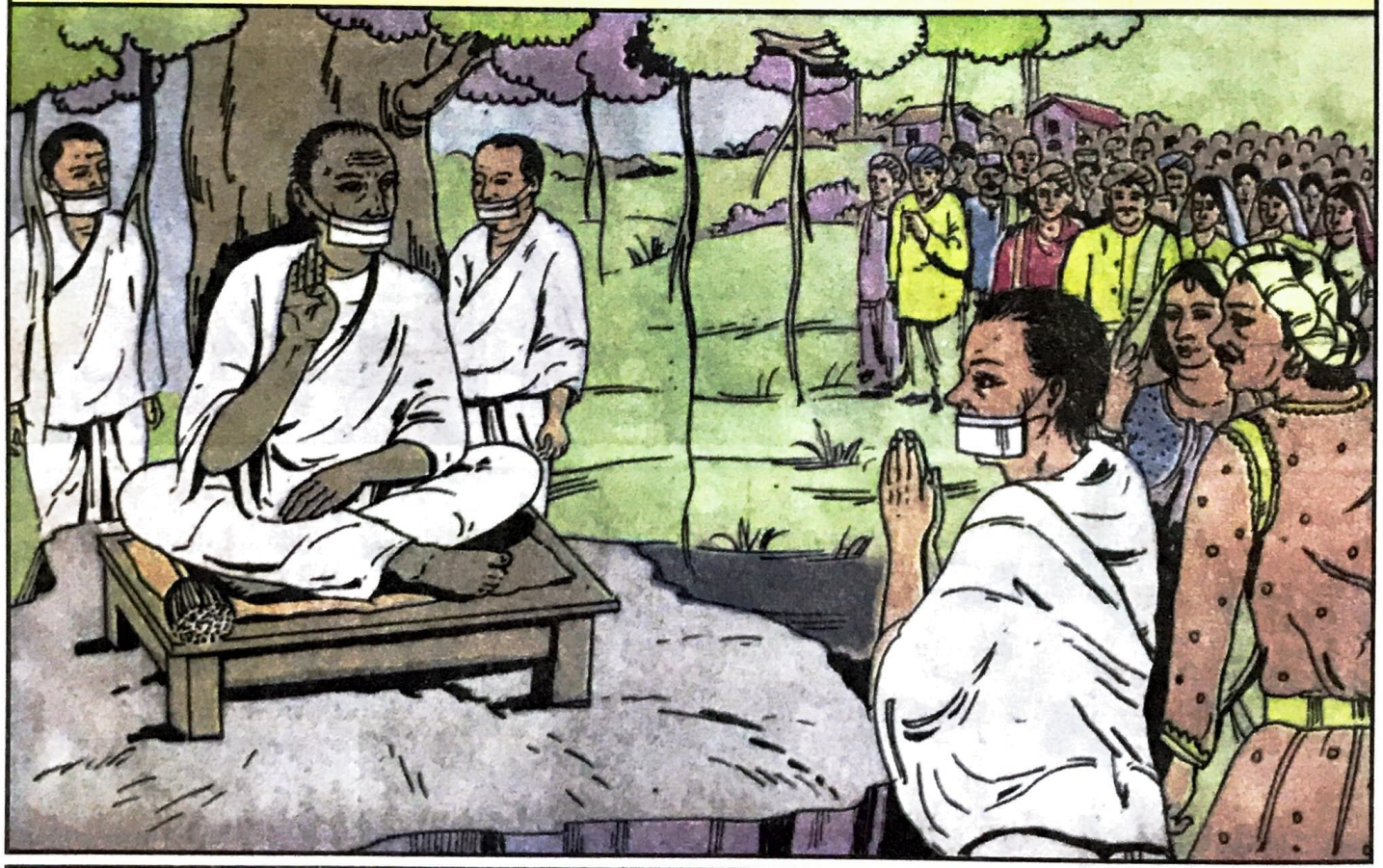

आचार्य भिक्षु को भाव दीक्षा लिये ३६ वर्ष संपन्न हो चुके थे, पर बारह से तेरह साधु नहीं हुए । हेम जी तेरहवें साधु हुए । उनके बाद संख्या एवं प्रभाव में यह संघ प्रवर्धमान होता गया । हेम जी की दीक्षा के साथ सुप्रसिद्ध प्राचीन ग्रंथ बंकचूलिया की वह भविष्यवाणी भी मिल गई जिसमें यह कहा गया कि सं. १८५३ के बाद धर्म का उद्योत होगा । मुनि श्री हेमराज जी संघ के स्तम्भ थे ।

दीक्षित होते ही उन्होंने स्वामी जी के दूसरे कंधे का वजन ले लिया । एक तरफ का वजन पहले ही मुनि खेतसी जी ने ले लिया था ।

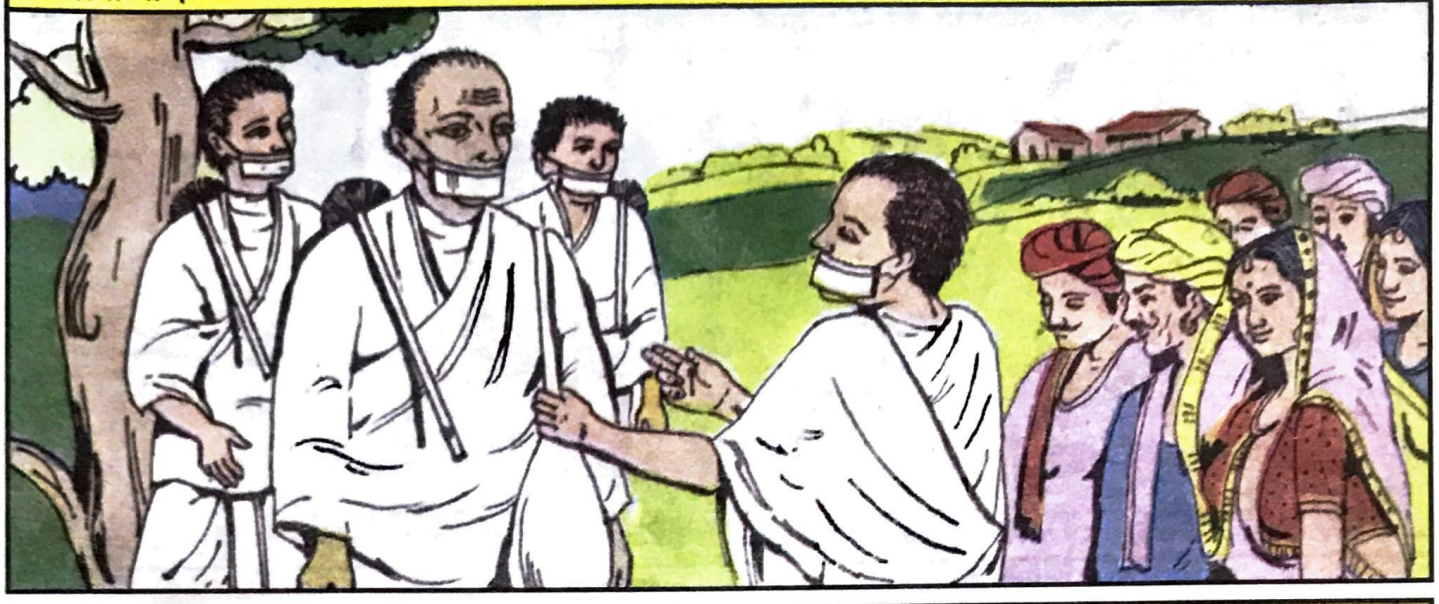

मुनि हेमराज जी ने छोटे-छोटे साधुओं को सब तरह से तैयार किया ।

सं. १९०४ में सिरियारी में जब उनका स्वर्गवास हुआ उससे पूर्व भूकंप आया, प्रकृति में परिवर्तन दिखाई दिया ।

आचार्य भिक्षु के सिद्धान्त एवं विचार को फैलाने में जहां साधु-साध्वियों का योगदान रहा वहां श्रावक-श्रविकाओं का भी पूरा सहयोग रहा । उनमें अग्रिम पंक्ति के एक श्रावक थे - श्री गेरुलाल व्यास । तेरापंथ नामकरण की जोधपुर की घटना के समय जो तेरह श्रावक दुकान में सामायिक कर रहे थे उनमें एक वे थे ।

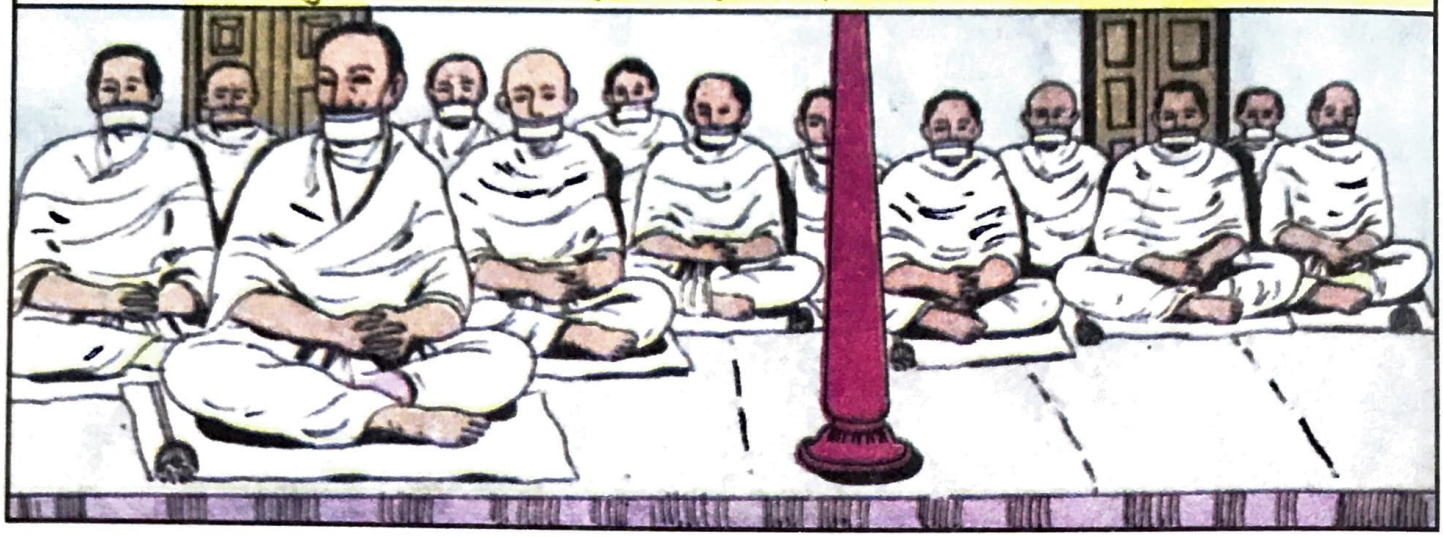

वे कासीदी का काम करते थे, कागद-पत्रों को इधर-उधर लाने - ले जाने के साथ अपनी नित्य उपासना बराबर करते थे ।

श्री व्यास ने मांडवी (कच्छ-गुजरात) के प्रमुख व्यापारी के मुनीम श्री टीकम डोसी के साथ धर्म - चर्चा कर उन्हें श्रावक बनाया । उन्होंने इसी तरह अपने जीवन में अनेक नये लोगों को जोड़ा ।

श्रावक बनने के बाद टीकम जी डोसी स्वामी जी के दर्शन करने कच्छ से मारवाड़ की ओर ऊंट पर सवार होकर रवाना हुए ।

पाली पहुंचकर स्वामी जी के दर्शन किये और ढेर सारे प्रश्न पूछे । सही व तथ्यपरक समाधान पाकर वे अति प्रसन्न हुए ।

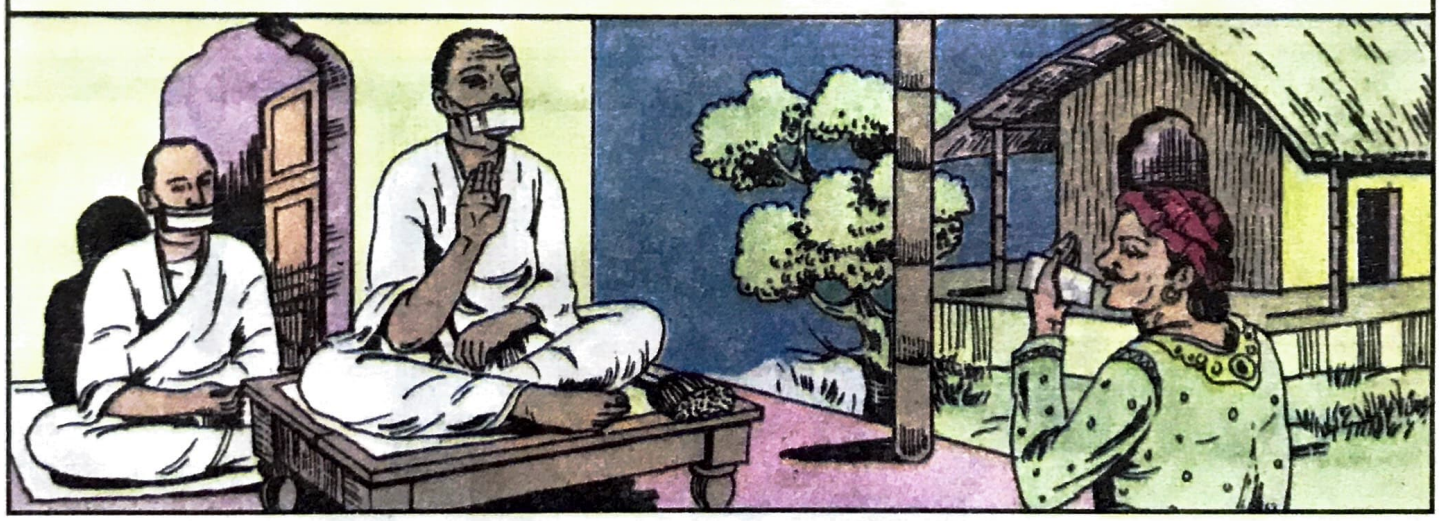

टीकम जी मांडवी में व्याख्यान भी देते थे । उन्होंने अनेक लोगों को समझाकर धर्मसंघ का अनुयायी बनाया । वे समय-समय पर सूत्र भी लिखा करते थे ।

विजयचंद जी पटवा व उनके मित्र वर्धमान जी श्रीश्रीमाल ने पूरी रात आचार्य भिक्षु से धर्म चर्चा की और उनके अनुयायी बन गये।

वे बड़े धर्मनिष्ठ श्रावक थे। पाली (राजस्थान) में एक दिन दुकान पर ग्राहक आया और अपने व्यापारिक लेन-देन के क्रम में दो हजार रुपये नोली में भरकर दिये। दोपहर के प्रवचन में जल्दी जाने के चक्कर में वह नोली (थैली) दुकान के बाहर बरामदे में भूल गये।

प्रवचन स्थल पर ज्योंही सामायिक करने बैठे तो -

ओह! वह नोली तो मैं बाहर भूल गया... वापस जाऊं... नहीं अब तो सामायिक करके ही जाऊंगा। यदि धन मेरा है तो कहीं नहीं जायेगा।

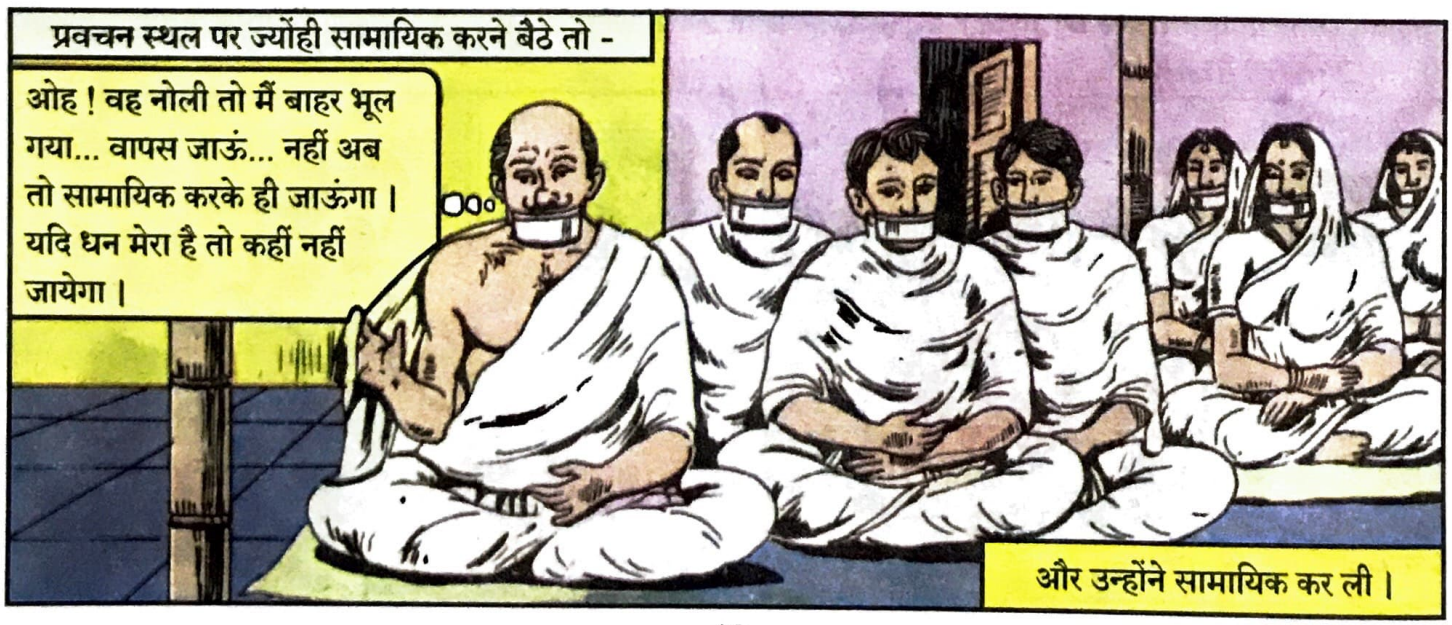

और उन्होंने सामायिक कर ली।

उधर बरामदे में एकांत देखकर एक बकरा ऊपर चढ़ा...

...और उस धन की नोली के ऊपर बैठ गया तथा सुस्ताने लगा ।

सामायिक पूरी होने के बाद पटवा जी दुकान पर पहुंचे । इनको देखते ही बकरा उठा तो नोली को वहां पाकर पटवा जी आश्चर्य चकित हो गये !

यह सब धर्म का प्रताप है ।

पटवा जी जहां धर्म के क्षेत्र में अग्रणी थे, वहां समाज व राष्ट्र के कार्य में भी पीछे नहीं थे । जोधपुर राज्य में दुष्काल की स्थिति में उन्होंने नरेश के प्रतिनिधि को एकमुश्त पचास हजार रुपये दिये ।

केलवा के शोभ जी कोठारी स्वामी जी के श्रद्धानिष्ठ श्रावक थे । एक बार विरोधियों ने षड्यन्त्र कर एक झूठे मुकदमे में फंसाकर उन्हें नाथद्वारा जेल में भिजवा दिया । जेल में बैठे शोभ जी केवल एक ही चिंतन में थे -

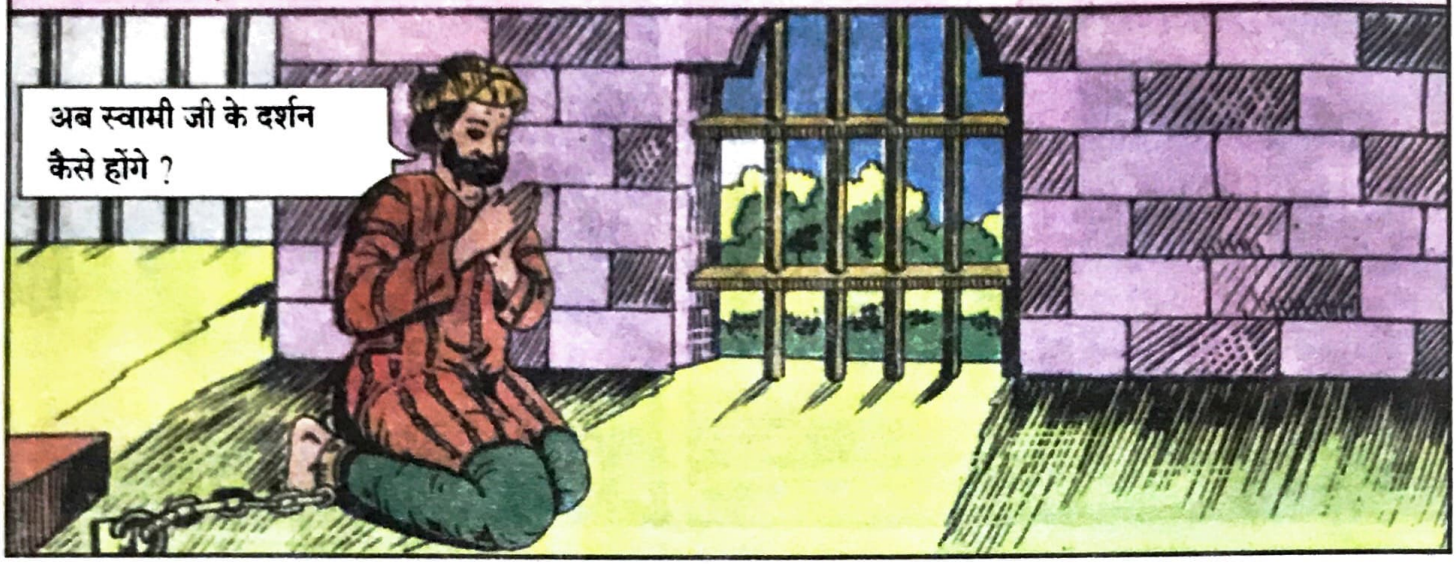

...इतने में शोभ जी के पैरों की बेड़ियाँ टूट गईं ।

जेल का अधीक्षक दौड़ा-दौड़ा आया । इस चामत्कारिक घटना से प्रभावित होकर शोभ जी को कारागृह से मुक्त कर दिया ।

स्वामी जी के साथ शोभ जी को आते देखा तो लोगों के आश्चचर्य का ठिकाना न रहा -

शोभ जी अच्छे रचनाकार थे । उन्होंने स्वामी जी के हर दस पद्य के पीछे एक-एक पद्य की रचना की । कुल अड़तीस सौ पद्य बनाए ।

पींपाड़ के गुमान जी लुणावत स्वामी जी के एक तत्त्वज्ञ श्रावक थे । उन्होंने स्वामी जी का संपूर्ण साहित्य अपने हाथों से लिखा ।

किशनगंज के ख्यातनामा, पहले विरोध के अगुवा श्री महेशदास जी तत्त्व समझकर पक्के श्रावक बन गये ।

राजनगर के श्रावक ब्रजलाल जी पोरवाल एक जानकार श्रावक थे ।

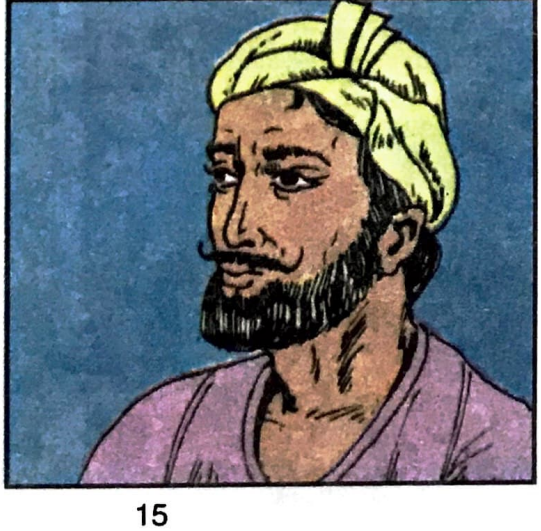

हर क्षेत्र में स्वामी जी को श्रद्धानिष्ठ, समर्पित, तत्त्वज्ञ श्रावकों का अच्छा योग मिला, वे श्रावक ऐसे स्तम्भ थे जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों को विशेष मजबूती प्रदान की थी ।

धर्मसंघ से अलग हुए मुनि चंद्रभाण जी ने आमेट की श्राविका चंदुबाई से कहा -

भीखण जी तो तुम्हें कंजूस कहते हैं। पैसा तो तुम्हारे पास है पर दान का गुण नहीं - ऐसा कहते थे ।

जा रे पैजार्‌या (थोथी बकवास करने वाले) । मुझे गुरु से दूर करना चाहता है । मेरे में कोई गलती देखने से कह दिया होगा । वे तो महान् पुरुष हैं ।

ऐसी थी वह मजबूत श्रविका ।

विरोधियों के भ्रमित करने पर एक भाट पाली की श्राविका के निवास पर पहुंचा और बोला -

सेठानी जी ! प्यास लगी है, एक लोटा पानी पिलाओ ।

इसके चेहरे से लगता है कि यह विरोधी लोगों द्वारा भरमाया हुआ है... ठीक है... देखती हूं...

धार्मिक तिथि चतुर्दशी होने से वह कच्चे जल का स्पर्श नहीं करती थी । वह अंदर गई और वापस आकर बोली -

लो भाट जी । आप पानी क्या, घी से भरा लोटा लें ।

भाट बहुत खुश हुआ ।

घी से भरा लोटा लेकर उन विरोधियों के बीच बाजार में आया और फटकारा -

ऐसी लक्ष्मी औरत के लिए तुम व्यर्थ ही हमें भरमाते हो ।

ऐसी थी वह विवेकशील श्रविका ।

स्वामी जी एक महान् साहित्यकार थे । प्रतिकूल परिस्थितियों एवं प्रतिरोधों के बावजूद उन्होंने अड़तीस हजार पद्यों की रचना की ।

आप एक प्रखर प्रवचनकार थे ।

आप महान् चर्चावादी थे । उन्हें आगम के रहस्यों की गहरी पकड़ थी । तत्त्व जिज्ञासु आपके तलस्पर्शी ज्ञान को भूल नहीं सकते । चर्चा में उन्हें जीत लेने का तो किसी को स्वप्न भी नहीं आ सकता था ।

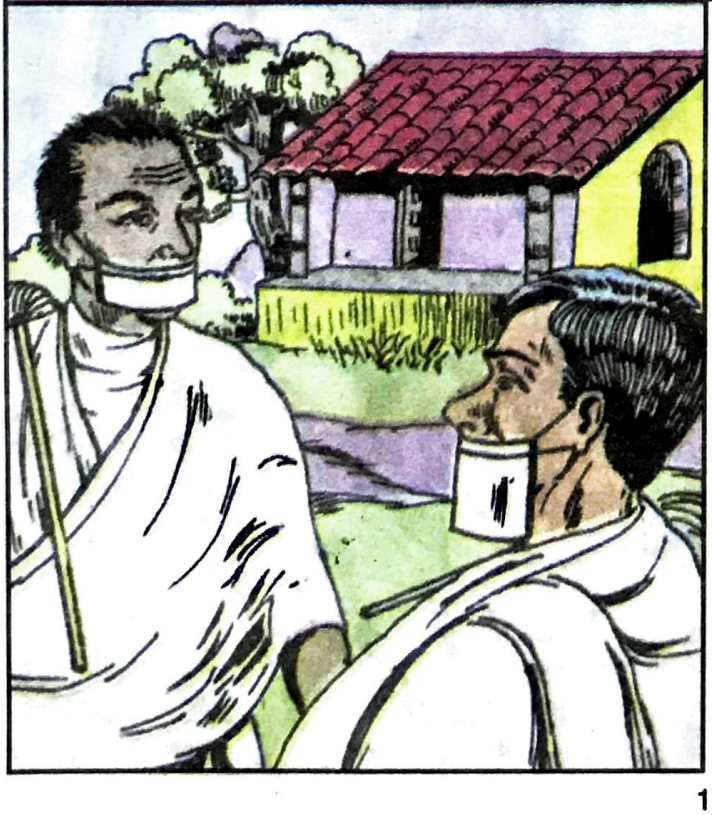

प्रखर विरोध में भी वे बड़े समत्वशील थे ।

मनुष्य के मन में उठने-गिरने वाले भावों को वे बहुत शीघ्र पकड़ लेते थे । आवश्यक होने पर व्यक्ति के भीतर छिपी बात का उद्‌घाटन करते तो लोग आश्चर्यचकित हो जाते कि स्वामी जी ने यह रहस्य कैसे जाना !

स्वामी जी स्वभाव से जितने गंभीर थे उतने ही विनोदी भी ।

कितनी मूर्तियां हो?

तीन ।

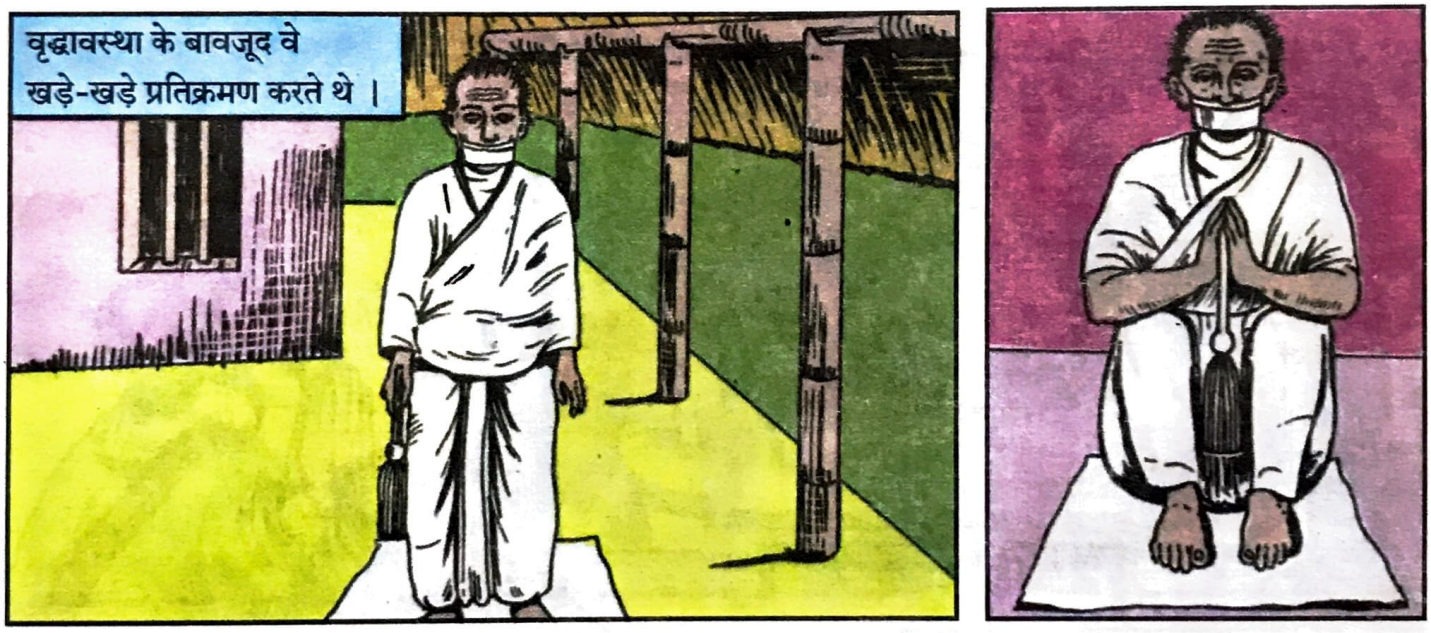

वे महान् पदयात्री थे । उनके डग लम्बे थे ।
वृद्धावस्था के बावजूद वे खड़े-खड़े प्रतिक्रमण करते थे ।
स्वर्गवास के एक माह पूर्व तक तो वे स्वयं गोचरी करते थे ।

मेवाड़ की त्रिवर्षीय यात्रा परिसंपन्न कर स्वामी जी मारवाड़ पधारे । यह उनकी अंतिम मेवाड़ यात्रा थी ।

सं. १८५९ का पाली चातुर्मास संपन्न कर विचरते-विचरते सोजत रोड़ पधारे । वहां छतरी में विराजे । साधु-साध्वियों के अगले चातुर्मास निर्णीत किये । वहीं पर बैठे सिरियारी के हुकुमचंद जी आच्छा ने सिरियारी में अपनी पक्की हाट में चातुर्मास की विनती की, जिसे स्वामी जी ने स्वीकार कर लिया ।

सं. १८६० का चातुर्मास करने स्वामी जी सिरियारी पधारे । यह उनका अंतिम चातुर्मास था ।

तत्कालीन मारवाड़ राज्य के दक्षिणी-पूर्वी किनारे का सिरियारी बहुत समृद्ध और सुंदर शहर गिना जाता था । वहां ठाकुर साहब अधिपति थे । नगर के बिल्कुल सटी हुई पर्वत श्रेणी परकोटे की तरह सुरक्षा करती है । कुछ ही दूरी पर स्थित अरावली पर्वत-माला से सुशोभित है । जब स्वामी जी ने सिरियारी में अपना चातुर्मास किया उस समय ओसवालों के नौ सौ इक्यासी घर थे । उनमें से सात सौ-इक्यासी परिवार तो तेरापंथ के अनुयायी थे ।

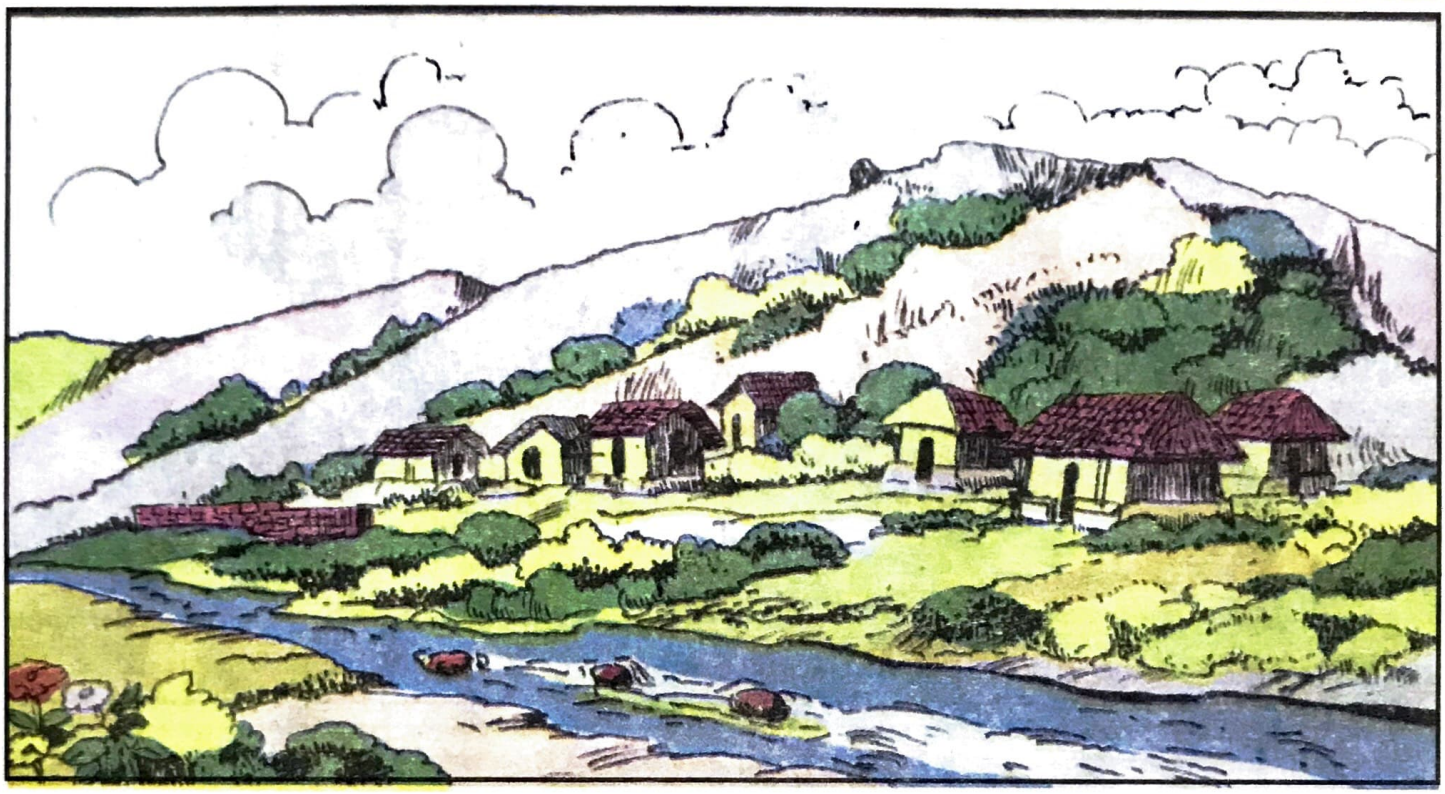

स्वामी जी के प्रवचन में काफी संख्या में भाई-बहिन धर्मोपदेश का रस-पान करते थे ।

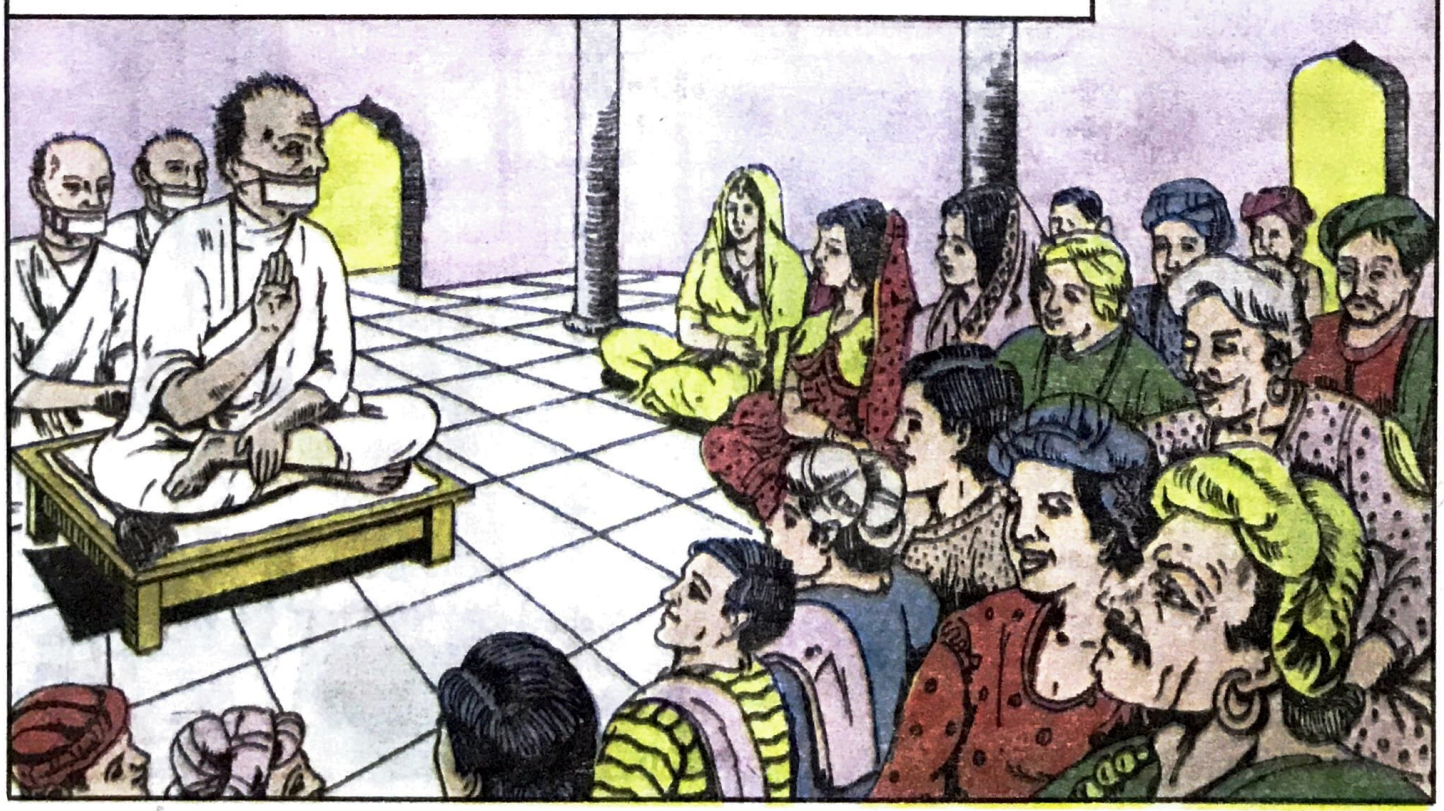

चातुर्मास का पहला महिना सम्पन्न होने को था । स्वामी जी के शरीर में साधारण दस्तों की शिकायत रहने लगी । औषधि-सेवन किया गया फिर भी कोई लाभ नहीं हुआ । भाद्र शुक्ला चतुर्थी को अचानक ही ऐसा आभास होने लगा कि अब उनका आयुष्य निकट आ गया है । वे जीवन के प्रति जितने जागरूक थे मृत्यु के प्रति भी उतने ही सजग थे । आभास पाते ही अपने पास सेवा-निमित्त बैठे हुए मुनि खेतसी जी से बिना किसी भूमिका के कहा -

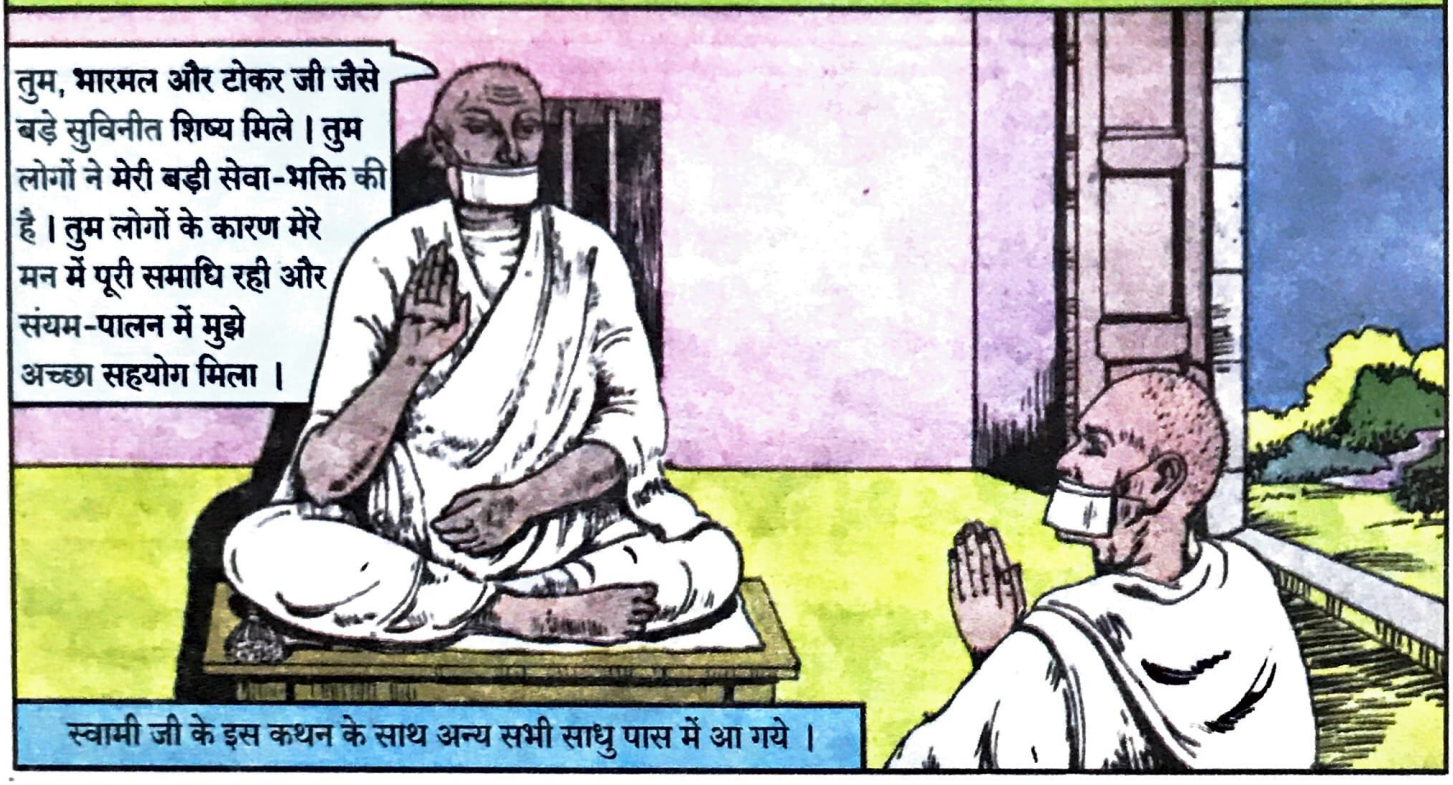

स्वामी जी के इस कथन के साथ अन्य सभी साधु पास में आ गये ।

मुनि रायचंद जी को शिक्षा प्रदान करते हुए स्वामी जी ने कहा -

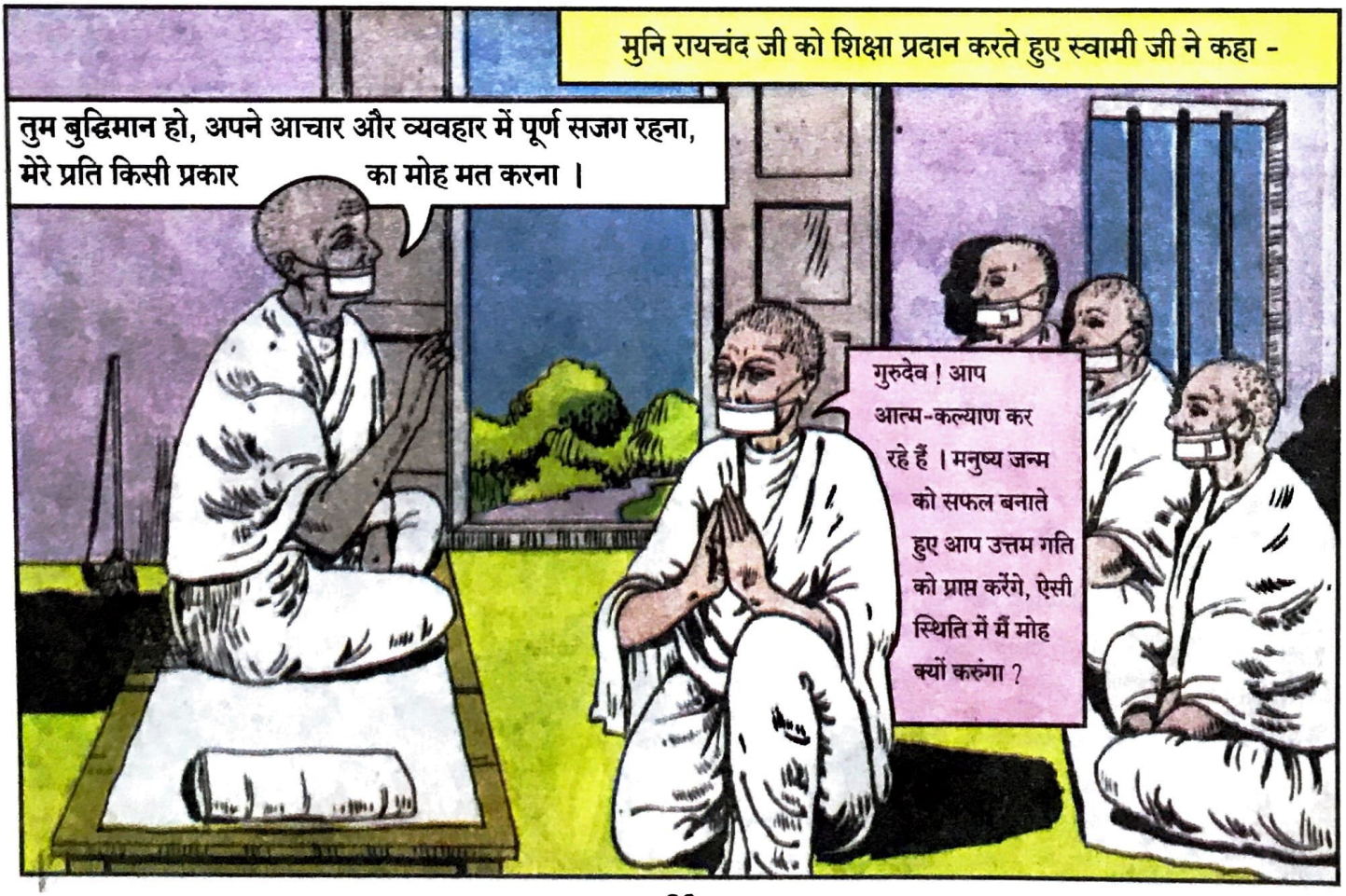

युवाचार्य भारमल जी ने कहा -

आपके चरणों में रहते हुए मन सदैव साहस से भरा हुआ था। अब आप आगे की तैयारी करने लगे हैं। आप जैसे पवित्र आत्मा गुरु के दर्शनों का वियोग मेरे लिए अत्यन्त दुःस्सह हो जायेगा।

तुम किसी प्रकार की चिंता मत करना। निर्मल साधुपन की आराधना करके जब तुम देवगति में जाओगे तब महाविदेह में अरिहंतों व मेरे से बहुत बड़े ज्ञानी व संयमी साधुओं के दर्शन प्राप्त करोगे। तुम स्वयं भी शीघ्र ही कर्म-बंधन से मुक्त बनोगे।

सभी छह संत स्वामी जी के पास बैठे थे। उस समय उन्होंने बड़े मार्मिक शब्दों में अंतिम शिक्षा दी। उसका सार इस प्रकार है -

अंतिम शिक्षा

१. जिस तरह तुम लोगा। मुझे बहुमान देते हो, विश्वास रखते हो वैसा ही भारमल के प्रति भी रखना।
२. शुद्ध आचारवान् साधुओं की संगति करना और अनाचारियों से दूर रहना।
३. सारे साधु-साध्वियां परस्पर में विशेष प्रेम भाव रखना, एक-दूसरे के प्रति राग-द्वेष मत करना।
४. गुटबाजी कभी नहीं करना।
५. उपयुक्त व योग्य समझकर ही दीक्षित करना। बाद में कोई अयोग्य निकल जाये तो उसे पृथक् कर देना।
६. एक गुरु की आज्ञा में रहना।
७. कोई बात समझ में न आये तो उसे गुरु तथा बुद्धिमान साधुओं के विश्वास से मान लेना, उसे लेकर खींचतान मत करना।

महाप्रस्थान की तैयारी में लगे स्वामी जी का संयमी जीवन सदैव निर्मल रहा, फिर भी छद्मस्थता के कारण दोष लगने की संभावना तो रहती ही है । उनकी आलोचना कर निर्मल बनने के लिए उद्यत हुए । युवाचार्य भारमल जी व मुनि खेतसी जी जैसे शिष्यों की उपस्थिति में आत्म-मंथन कर "मिच्छामि दुक्कड़ं" ग्रहण किया और सबके साथ 'खमत-खामणा' किया । इसे अध्यात्म के क्षेत्र में 'अंतर् स्नान' कहा जाता है ।

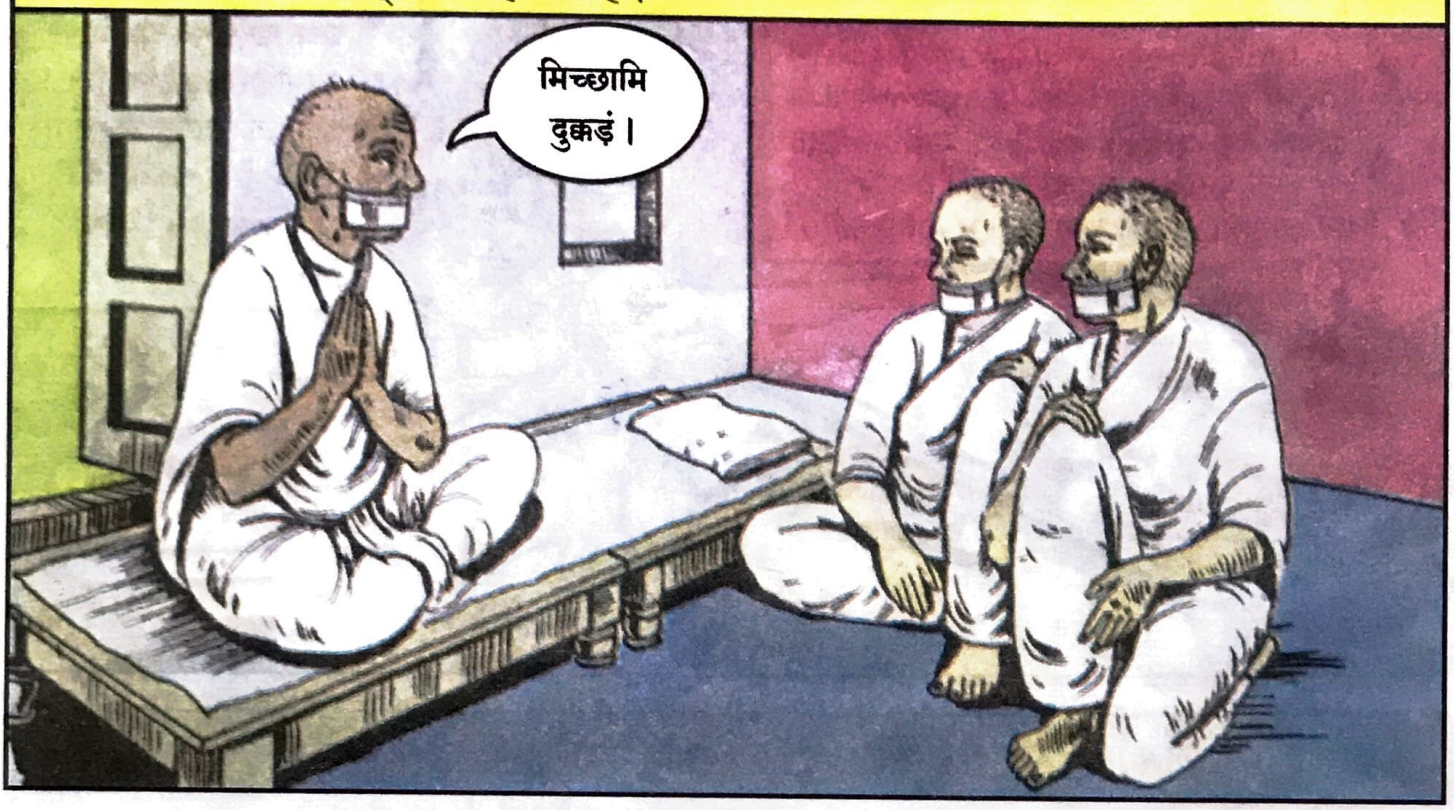

भाद्र शुक्ला द्वादशी के दिन स्वामी जी स्वयं चलकर कच्ची हाट से पक्की हाट पधारे ।

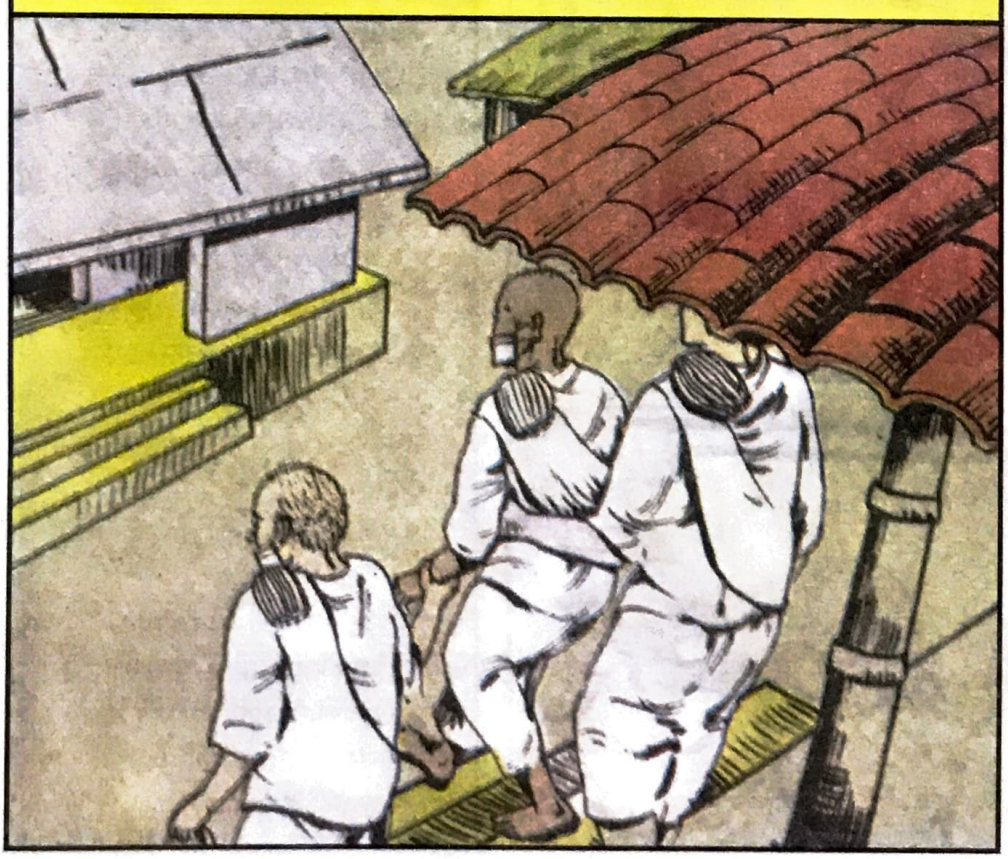

शिष्यों ने बिछौना किया और उस पर वे विश्राम करने लगे ।

विश्राम करते हुए कुछ ही समय हुआ होगा कि बाल साधु रायचंद जी ने पास आकर कहा -

स्वामिन् ! अब तो आपके शरीर का पराक्रम क्षीण पड़ रहा है ।

यह सुनकर स्वामी जी तत्क्षण उठ बैठे युवाचार्य भारमल जी व मुनि खेतसी जी को बुलाया । उनके आते ही स्वामी जी ने ...

...अरहंत, सिद्ध को वंदन कर सबके सामने ऊंचे स्वर से जीवन भर के लिए तीनों आहार का त्याग कर 'संथारा' कर लिया ।

जब 'संथारा' स्वीकार किया उस समय पचास मिनट दिन शेष था । संथारे की बात हवा की तरह चारों और फैल गई । आस-पास के क्षेत्रों से लोगों का सैलाब उमड़ पड़ा । बाजार की गली में लोग समा नहीं रहे थे ।

रात्रि में युवाचार्य भारमल जी ने प्रवचन दिया, जिसे स्वामी जी ने बड़ी तल्लीनता से सुना ।

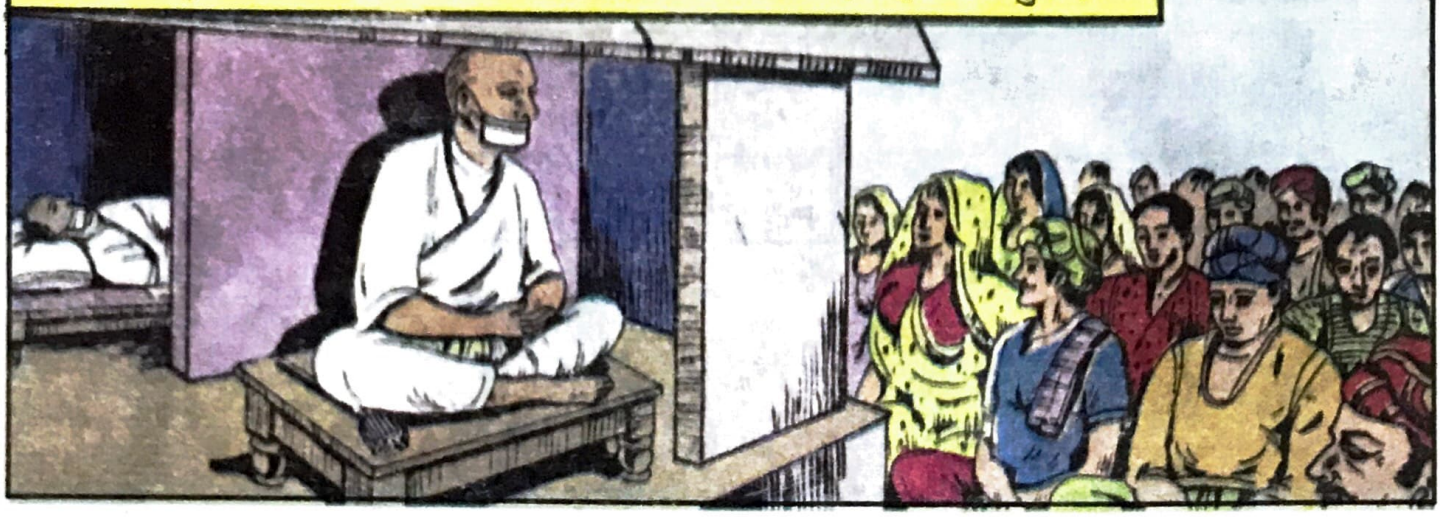

भाद्र शुक्ला त्रयोदशी । दिन के करीब ग्यारह बजे थे । उस समय एक आश्चर्यान्वित करने वाली घटना घटी । स्वामी जी ने साधुओं से कहा -

स्वामी जी की इस बात पर किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया । जिनका थोड़ा बहुत ध्यान गया उन्होंने सोचा कि स्वामी जी पूर्ण सचेत अवस्था में नहीं हैं । उनका ध्यान साधुओं में लगा हुआ है इसलिए वे ऐसा कह रहे हैं ।

स्वामी जी के इस कथन को एक घंटा भी नहीं हो पाया था कि मुनि वेणीराम जी व कुशाल जी पाली से पहुंच गये ।

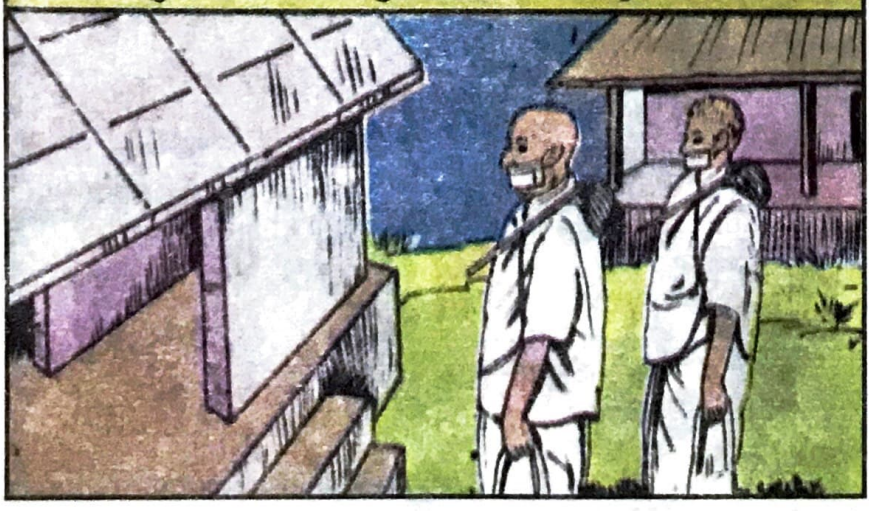

खेरवा गांव से तीन साध्वियां बखतू जी, झूमा जी, डाहा जी भी उसी समय पहुंच गईं ।

आये हुए साधु-साध्वियों ने स्वामी जी को वंदन किया । स्वामी जी ने हाथ उठा कर संकेत से वंदना स्वीकार की और सुखसाता पूछी ।

दो अंगुलियां आंखों की ओर उठाकर स्वामी जी ने मुनि चेणीराम जी के आंखों की गड़बड़ के बारे में साता पूछी ।

स्वामी जी ने जो कुछ कहा वह यथावत् मिल गया । लगता है कि उनको अंतिम अवस्था में अवधि ज्ञान (विशेष अतीन्द्रिय ज्ञान) उत्पन्न हुआ था । स्वामी जी को लेटे हुए काफी समय हो चुका था अतः बैठने की इच्छा होने पर साधुओं ने सहारा देकर बिठाया ।

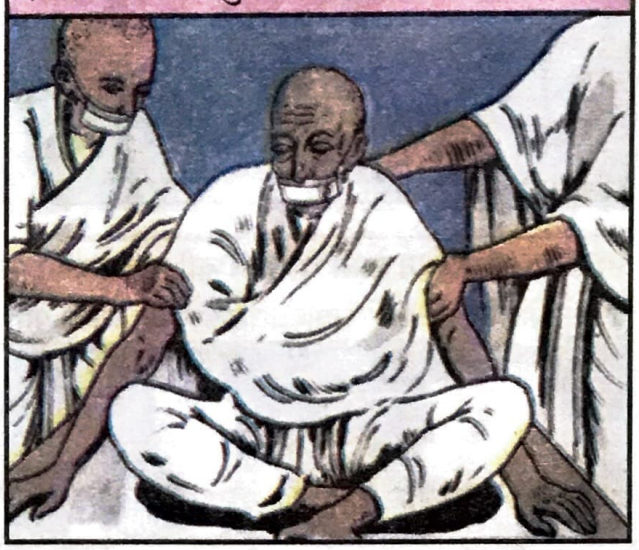

वि. सं. १८६० भाद्र शुक्ला त्रयोदशी मंगलवार, दिन के करीब दो बजे । पद्मासन में स्वामी जी का स्वर्गवास हो गया । उन जैसा समाधिपूर्ण महाप्रस्थान भी विरल मनुष्यों का होता है । वे जैन परंपरा के एक महान् प्रदीप स्तम्भ थे ।

तेरह गुमटी की बैकुंठी में स्वामी जी के पार्थिव शरीर को रखा । अंतिम दर्शन के लिए सैंकड़ों गांवों के हजारों लोगों से पूरा सिरियारी नगर अटा पड़ा था ।

नगर से सटकर बहने वाली बरसाती नदी के दक्षिणी किनारे पर खड़े ऊंचे पर्वत की उपत्यका में कुछ ऊंची जमीन पर हजारों-हजारों लोगों की उपस्थिति में स्वामी जी के पार्थिव शरीर को अग्नि-समर्पित किया गया ।

जहां पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार हुआ वहां बाद में एक भव्य चबूतरा (समाधि) बनाया गया । समय के साथ वह मिट्टी में ढ़क गया । उसे तेरापंथ द्विशताब्दी वर्ष (सं. २०१७) में खोज निकाला, फिर जीर्णोद्धार किया ।

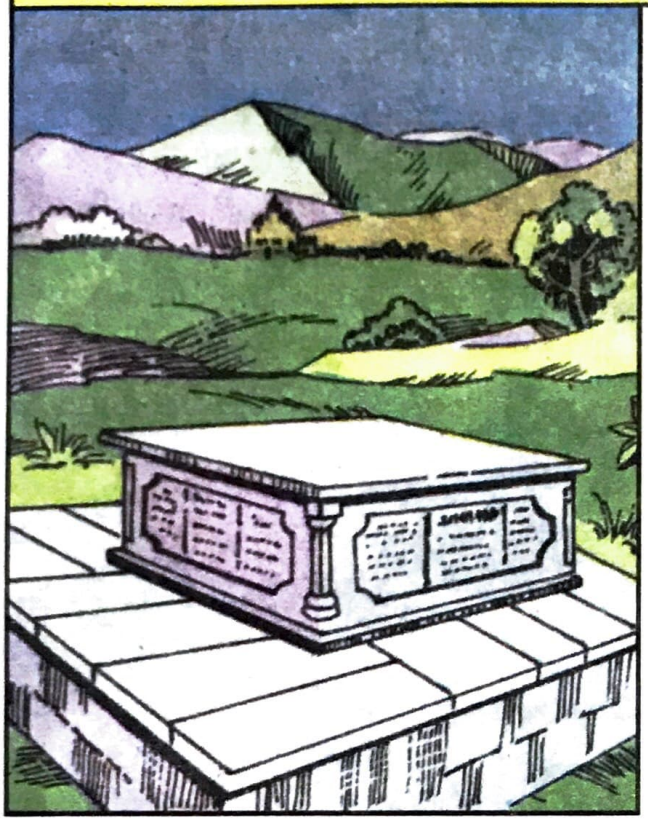

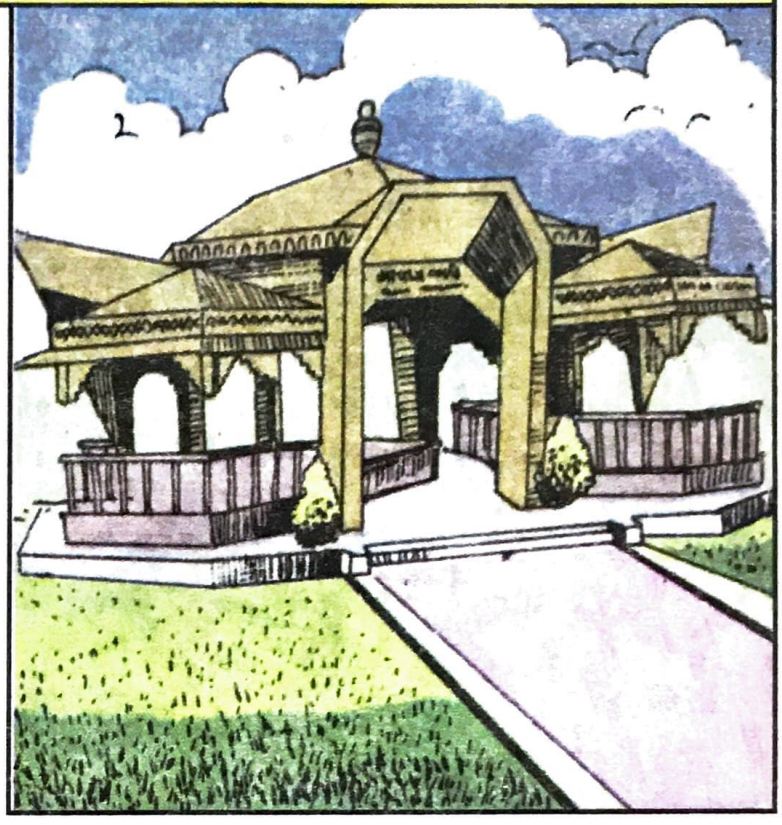

आचार्य श्री तुलसी ने सं. १९३९ का चातुर्मास राणावास किया था । उस समय 'चरम महोत्सव' (स्वामी जी का स्वर्गवास दिन) मनाने हेतु वे ससंघ दस कि.मी. चलकर सिरियारी पधारे । उस कार्यक्रम में भारत के राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह व अन्य विशिष्ट लोगों ने भाग लिया । उस समय करीब चालीस हजार लोग उपस्थित थे । उसके बाद से हर वर्ष भाद्र शुक्ला बारस को 'धम्म जागरणा' व तेरस को मूल कार्यक्रम आयोजित होता है । वैसे बारह ही महीने लोगों का आगमन होता है । लोग यहां आकर जप आदि का विशेष अनुष्ठान भी करते हैं ।

चेलावास में हीरविजय जी नाम के यति रहते थे । स्वामी जी से वे अत्यन्त प्रभावित थे, वैसे प्रारंभ में वे बहुत द्वेष रखा करते थे । स्वामी जी के शास्त्रीय ज्ञान, न्याय युक्त उत्तर व साधना ने उनके भीतर के द्वेष-भाव को धो डाला । स्वामी जी के स्वर्गवास होने के समाचार सुने तो उपाश्रय से बाहर आकर यति जी भाव विह्वल हो कर फफक-फफक कर रोने लगे । गांव के लोग इकट्ठे हो गये और पूछने लगे -

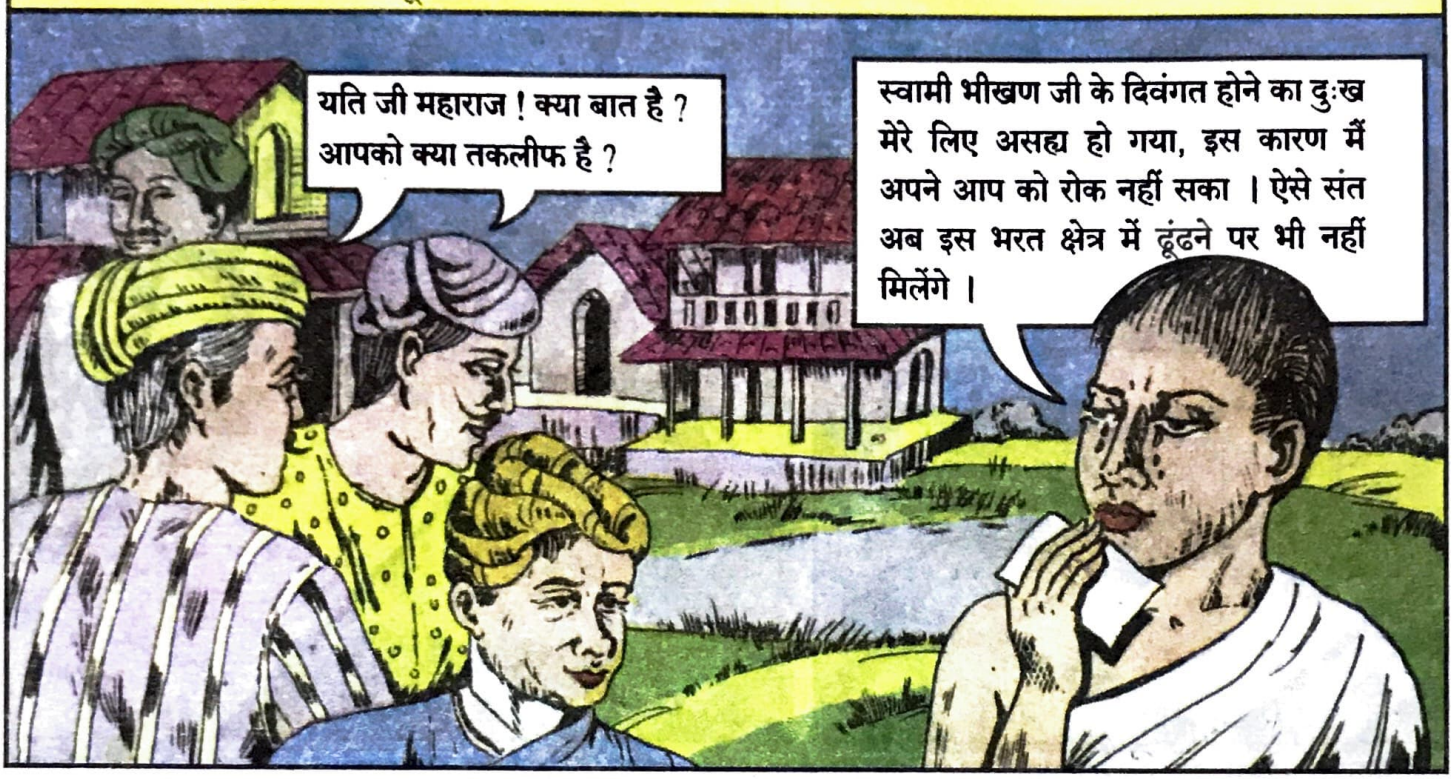

यति जी मंत्र विद्या के अच्छे ज्ञाता थे । उन्होंने अनेक मंत्र साध रखे थे । स्वामी जी कहां उत्पन्न हुए हैं ? यह जानने के लिए रात्रि में पूरे अनुष्ठान के साथ एकांत कक्ष में बैठे और मंत्र शक्ति के द्वारा सिद्ध हुए देव का आह्वान किया । संयोग से उनका पहला, फिर दूसरा आह्वान निष्फल रहा । कुछ समय बंद करने के बाद उन्होंने तीसरी बार फिर आह्वान किया...

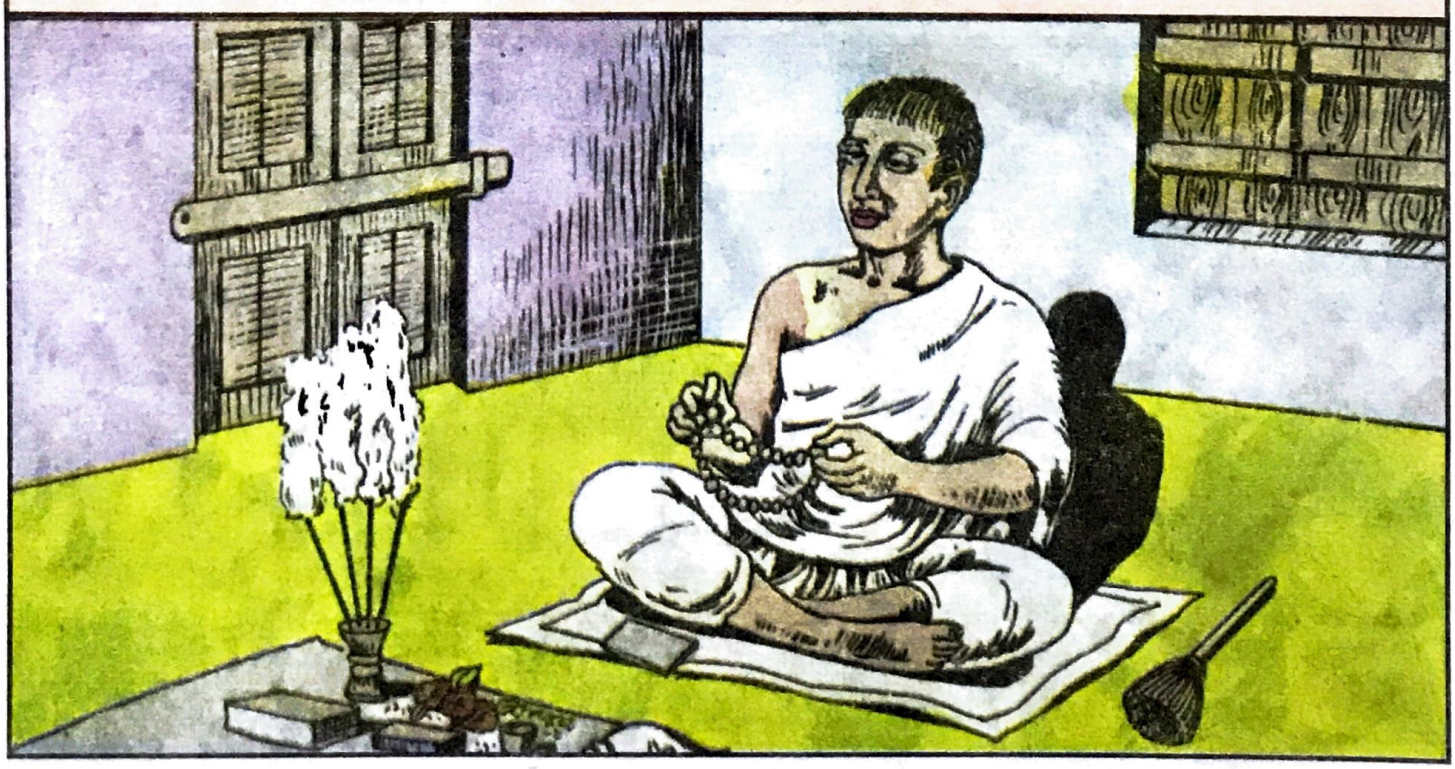

...इस बार देवता तत्काल उपस्थित हो गया । यति जी ने पूछा -

देवानुप्रिय ! क्या कारण था कि आप दो बार आह्वान करने पर भी नहीं आये ?

दोनों बार मुझे ज्ञात तो हो गया, पर उस समय मैं महाविदेह क्षेत्र में भगवान सीमंधर स्वामी के दर्शनार्थ गया हुआ था । वहां उस समय भरत क्षेत्र के बहुत बड़े आचार्य भीखण जी, जो कि ब्रह्म (पांचवे) देवलोक के इन्द्र बने हैं, दर्शनार्थ आये हुए थे । मैं उस विशिष्ट अवसर को देखने से अपने आपको वंचित नहीं रखना चाहता था ।

मैंने भी स्वामी भीखण जी के संबन्ध मेंजानने के लिए ही आपको आमंत्रित किया था ।

देवता ने पूरा वृत्तांत उन्हें सुना दिया, जो वहां देखा था । यति जी की अन्य जिज्ञासाओं का शमन कर देवता अन्तर्धान हो गया । दूसरे दिन यति जी ने लोगों को स्वामी जी के पांचवें देवलोक के इन्द्र होने की बात कही । यह देव आह्वान व इन्द्र बनने की बात तेजी से दूर-दूर तक फैल गई और वह सर्व सुलभ बन गई ।

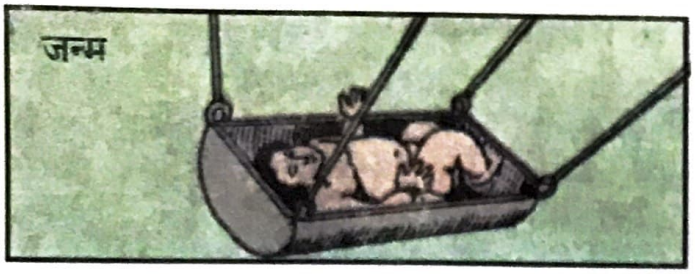

स्थानसमय	
कंटालिया (पाली, राजस्थान)	आषाढ़ शुक्ला १३ सं. १७८३ (१ जुलाई १७२६)

बगड़ी (पाली राजस्थान)	मार्गशीर्ष कृष्णा १२ सं. १८०८ (३ नंवबर १७५१)

राजनगर (राजस्थान)	सं. १८१५ (सन् १७५८)

जैतसिंह जी की छतरी बगड़ी (पाली राजस्थान)	चैष शुक्ला ९ सं. १८१७ (२३ मार्च १७६०)

केलवा (राजस्थान)	आषाढ़ पूर्णिमा सं. १८१७ (२८ जून १७६०)

सिरियारी (पाली राजस्थान)	भाद्रपद शुक्ला १३ सं. १८६० (३० अगस्त १८०३)

विहार क्षेत्र - उदयपुर, जोधपुर, कोटा संभाग (राजस्थान), कुछ दिनों के लिए बीकानेर संभाग ।
चातुर्मास - स्थानकवासी मुनि के रूप में आठ व तेरापंथ के आचार्य रूप में चौवालीस ।
शिष्य परिवार - स्वामी जी के अतिरिक्त १०४ व्यक्ति दीक्षित बने । उनमें ४८ साधु व ५६ साध्वियां थी । स्वामी जी दिवंगत हुए उस समय २१ साधु व २७ साध्वियां विद्यमान थी ।

स्वामी जी के नाम का इतना बड़ा चमत्कार है कि हर मुसीबत व कठिनाई में व्यक्ति अपने आपको असहाय महसूस नहीं करता। 'ॐ भिक्षु' एक मंत्र बन चुका है जो बड़ा ही मंगलकारक एवं विघ्न विनाशक है। रावलियां (उदयपुर) की रुपां जी की दीक्षा लेने की भावना हुई। परिवार वालों के सामने जब दीक्षा लेने का विचार रखा तो सबने मुखर विरोध किया।

... इसी के साथ शुरू हुई रूपां जी की तपस्या एवं 'ॐ भिक्षु' का सतत जप। जप ने दिखाया अपना रंग और 'खोड़ा' टूट गया। अधिकारी एवं पारिवारिक जन आश्चर्य के साथ घबरा भी गये। और उन्हें दीक्षित होने की सहर्ष अनुमति मिल गई।

... इस पर भी जब रूपां जी की भावना नहीं बदली तो उन्हें रावले में 'खोड़े' में पैर डालकर बंद कर दिया। परिवार वालों का यह आखिरी हथियार था।

मान जी जसोल (बाडमेर, राजस्थान) के श्रद्धा निष्ठ श्रावक थे । एक बार सर्प जाति के एक विषैले 'कालिय' नाग ने उन्हें डस लिया ।

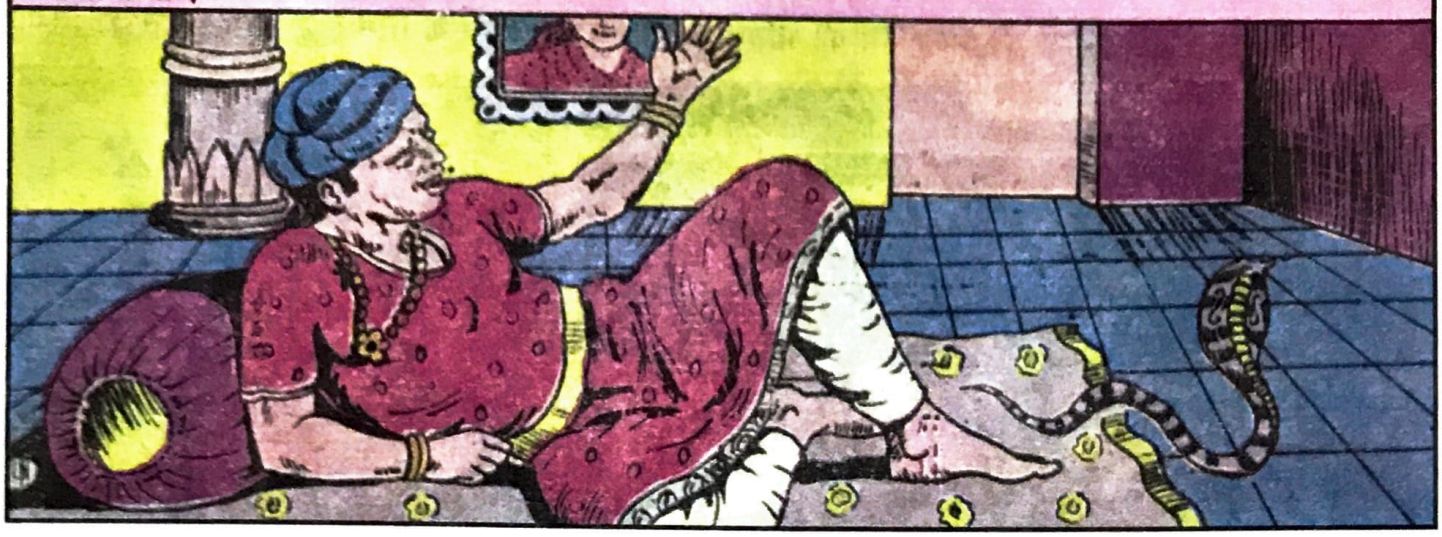

तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक के बावजूद जहर उतरा नहीं, धीरे-धीरे सुन्नता बढ़ने लगी, कोई भी उपाय काम नहीं रहा था । आखिर मान जी ने...

ऊंचे स्वर में 'ॐ भिक्षु' की रटन शुरू कर दी । लोगों के उस समय आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब लाइलाज लगने वाला 'सर्पदंश' एकदम ठीक हो गया ।

आचार्य भिक्षु की उत्तरवर्ती आचार्य परम्परा में अनेक महान् प्रतापी व प्रभावी आचार्य हुए हैं, जिन्होंने अपने मौलिक चिंतन, सामयिक सूझ-बूझ और तपस्तेज से तेरापंथ धर्मसंघ की नींव को सींचा है, पुख्ता बनाया है और आज यह पूरी मानव जाति के लिए आसरा बन गया है । आचार्य श्री महाप्रज्ञ एवं उनके उत्तराधिकारी युवाचार्य श्री महाश्रमण के नेतृत्व एवं मार्गदर्शन में यह संघ शतशाखी बनकर पूरे मानव-समाज के कल्याण हेतु प्रयत्नशील है । उत्तरवर्ती परंपरा में ये आचार्य हुए हैं -

आचार्य श्री भारमल जी

जन्म : सं. १८०४ मूहा (बड़ा)
दीक्षा : सं. १८१७ आषाढी पूर्णिमा - केलवा
आचार्य : सं. १८६० भाद्रव शुक्ला १३- सिरियारी
स्वर्गवास : सं. १८७८ माघ कृष्णा ८ - राजनगर

आचार्य श्री रायचंद जी

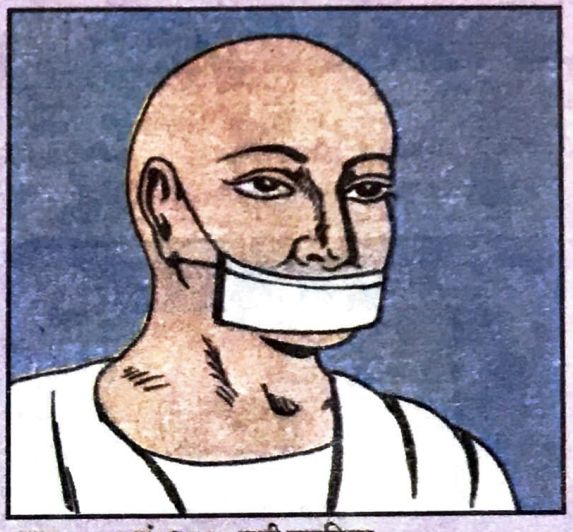

जन्म : सं. १८४७ बड़ी रावलिया
दीक्षा : सं. १८५७ चैत्र पूर्णिमा - बड़ी रावलियां
आचार्य : सं. १८७८ माघ कृष्णा ९ - राजनगर
स्वर्गवास : सं. १९०८ माघ कृष्णा १४ - छोटी रावलियां

आचार्य श्री जीतमल जी (जयाचार्य)

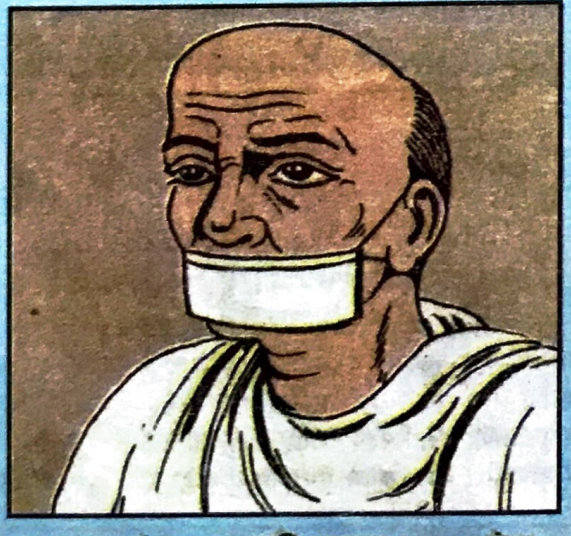

जन्म : सं. १८६० आश्विन शुक्ला १४ - रोयट
दीक्षा : सं. १८६९ माघ कृष्णा ७ - जयपुर
आचार्य : सं. १९०८ माघ शुक्ला १५ - बीदासर
स्वर्गवास : सं. १९३८ भाद्रपद कृष्णा १२ - जयपुर

आचार्य श्री मघराज जी

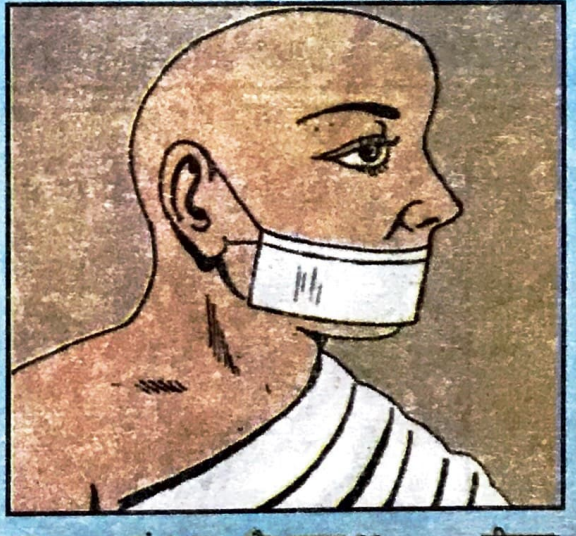

जन्म : सं. १८९७ चैत्र शुक्ला ११ - बीदासर
दीक्षा : सं. १९०८ मिगसर कृष्णा १२ - लाडनूं
आचार्य : सं. १९३८ भाद्रपद शुक्ला २ - जयपुर
स्वर्गवास : सं. १९४९ चैत्र कृष्णा ५ - सरदारशहर

आचार्य श्री माणकलाल जी

जन्म : सं. १९१२ भाद्रपद कृष्णा ४ - जयपुर
दीक्षा : सं. १९२८ फाल्गुन शुक्ला ११ - लाडनूं
आचार्य : सं. १९४९ चैत्र कृष्णा ८ - सरदारशहर
स्वर्गवास : सं. १९५४ कार्तिक कृष्णा ३ - सुजानगढ़

आचार्य श्री डालचंद जी

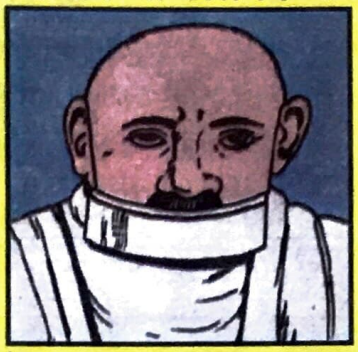

जन्म : सं. १९०९ आषाढ़ शुक्ला ४ - उज्जैन (म.प्र.)
दीक्षा : सं. १९२३ भाद्रपद कृष्णा १२ - इंदौर (म.प्र.)
आचार्य : सं. १९५४ माघ कृष्णा २ - लाडनूं
स्वर्गवास : सं. १९६६ भाद्रपद शुक्ला १२ - लाडनूं

आचार्य श्री कालूराम जी

जन्म : सं. १९३३ फाल्गुन शुक्ला २ - छापर
दीक्षा : सं. १९४४ आश्विन शुक्ला ३ - बीदासर
आचार्य : सं. १९६६ भाद्रपद शुक्ला १५ - लाडनूं
स्वर्गवास : सं. १९९३ भाद्रपद शुक्ला ६ - गंगापुर

आचार्य श्री तुलसी जी

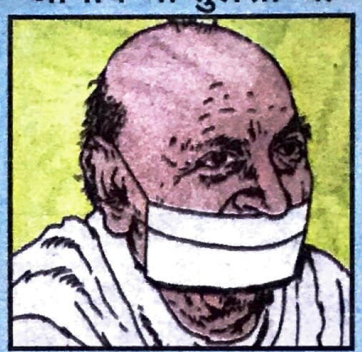

जन्म : सं. १९७१ कार्तिक शुक्ला २ - लाडनूं
दीक्षा : सं. १९८२ पौष कृष्णा ५ - लाडनूं
आचार्य : सं. १९९३ भाद्रपद शुक्ल ९ - गंगापुर
स्वर्गवास : सं. २०५४ आषाढ़ कृष्णा ३ - गंगाशहर

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी

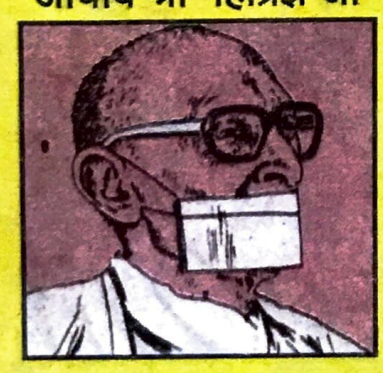

जन्म : सं. १९७७ आषाढ़ कृष्णा १३ - टमकोर
दीक्षा : सं. १९८७ माघ शुक्ला ७ - सरदारशहर
आचार्य : सं. २०५१ माघ शुक्ला ६ - नई दिल्ली
युगप्रधान : सं. २०५६ भाद्रपद शुक्ला ९ - नई दिल्ली

युवाचार्य श्री महाश्रमण जी

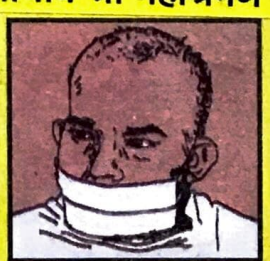

जन्म : सं. २०१९ बैसाख शुक्ला ९ - सरदारशहर
दीक्षा : सं. २०३१ माघ शुक्ला १४ - सरदारशहर
महाश्रमण: सं. २०४६ भाद्रपद शुक्ला ९ - लाडनूं
युवाचार्य : सं. २०५४ भाद्रपद शुक्ला १२ - गंगाशहर

अभिवंदना

आर्य भिक्षु एक क्रांति, एक दर्शन थे स्वयं । श्रमण संस्कृति के समुन्नत, सूत्र-धारक थे स्वयं ।
परम प्रज्ञावान् भिक्षु, परम शास्ता थे स्वयं । वीरवाणी पर समर्पित, एक आस्था थे स्वयं ॥१॥
चित्रमय संक्षिप्त झांकी, पांच भागों में बनी । आर्य भिक्षु की कहानी, सत्य श्रद्धा से सनी ।
मिला इंगित आर्यवर का, सतत निर्देशन मिला । तभी बच्चों के लिये यह भव्य गुलदस्ता खिला ॥२॥

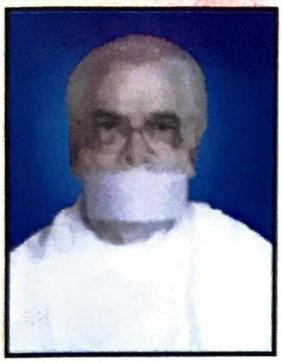

मुनि श्री सुमेरमल जी (लाडनूं)

जन्म - चैत्र शुक्ला 14, सं. 1989, लाडनूं (राज.),
दीक्षा - माघ शुक्ला 7, सं 1998, सरदारशहर (राज.)
आचार्य श्री तुलसी द्वारा
अग्रगण्य - ज्येष्ठ कृष्णा 3 सं. 2010, भीनासर (राज.)
सम्बोधन - तेरापंथ दर्शन मनीषी - माघ शुक्ला ६ सं. 2060, जलगांव (महाराष्ट्र)
विशेष : तीन मुमुक्षुओं को गुरु - निर्देश से दीक्षा प्रदान

मुनि श्री द्वारा लिखित चित्रकथा माला

अखूट खजाना

जैन धर्म में सामायिक एवं संत दर्शन का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है । इसके महत्व को प्रतिपादित करने वाले दो कथानक इस चित्रकथा में लिये गये हैं ।

क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु - भाग-1

तेरापंथ के प्रवर्तक, महान् संत, शिथिलाचार के विरुद्ध शंखनाद फूंकने वाले आचार्य भिक्षु के जन्म, स्थानकवासी परंपरा में दीक्षा व अभिनिष्क्रमण का चित्रण है ।

क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु - भाग-2

अभिनिष्क्रमण के बाद विरोध का स्वर बुलंद हुआ, केलवा की अंधेरी ओरी में तेरापंथ की विधिवत् स्थापना हुई । आहार पानी व स्थान की समस्या सामने आई, इन स्थितियों का सजीव निदर्शन है ।

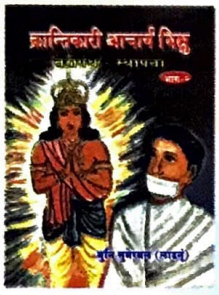

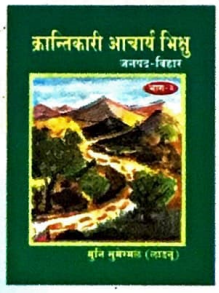

क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु - भाग-3

आचार-संहिता का कड़ाई से पालन, सिद्धान्त प्रतिपादन की कुशलता, असंकीर्णता, न्यायप्रियता, संघर्ष में भी शीतलता एवं संतुलन, प्रत्युत्पन्न मति, विनोद प्रियता जैसी विशेषताओं को प्रकट करते आचार्य भिक्षु के जीवन संस्मरणों का गुंफन है।

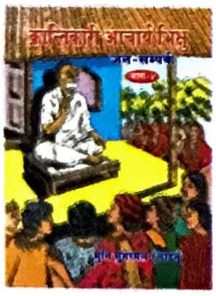

क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु - भाग-4

आचार्य भिक्षु हर बात को कथानाक व दृष्टांत के माध्यम से हरेक के गले उतार देते थे । उनका जनसंपर्क व्यापक था । ठाकुर (जागीरदार) से लेकर ठेट किसान तक उनसे प्रभावित थे । प्रस्तुत भाग में उनके जनसंपर्क की एक झलक प्रदर्शित की गई है ।

क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु - भाग-5

आचार्य भिक्षु आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे । उनके पास जो कोई भी आता वह प्रभावित हुए बिना नहीं रहता । विरोधी लोग भी उनकी विद्वता, साधनाशीलता कुशल वक्तृत्व एवं कष्ट सहिष्णुता का लोहा मानते थे । इन सबकी झलक इस भाग में है ।

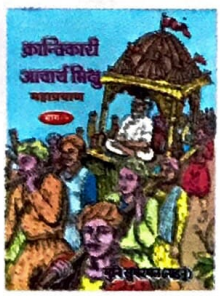

क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु - भाग-6

तेरापंथ के दूसरे आचार्य श्री भारमल जी आचार्य श्री भिक्षु के सर्वात्मना समर्पित थे । तीसरे आचार्य श्री रायचन्द जी बड़े पुण्यवान आचार्य थे ।
दोनों स्वामीजी के हाथों दीक्षित हुए । प्रस्तुत चित्र कथा में दोनों के जीवन की संक्षिप्त झलक प्रस्तुत है ।

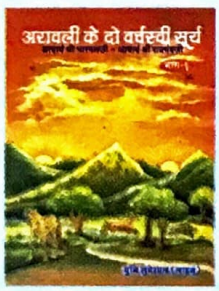

मुनि श्री की अन्य कथा पुस्तकें ।

1. परीलोक
2. बुद्धिलोक
3. नीतिलोक
4. प्रज्ञालोक
5. सत्यलोक
6. दिव्यलोक
7. नारीलोक
8. कर्मलोक
9. उपकार
10. संस्कार
11. सप्त व्यसन
12. विद्याधर श्रीपाल
13. जादूगर श्रीकांत
14. नैतिक कहानियां भाग-1
15. नैतिक कहानियां भाग - 2 आदि - आदि ।

आशीर्वचन

चित्रकथा साहित्य की आकर्षक विधा है । यह आबालवृद्ध सबके मन को भाती है । भावी पीढ़ी के लिए तो यह संस्कार-निर्माण की कुन्जी बन सकती है । चित्रकथाएं बहुत लिखी जाती हैं, पर जो सुरुचिपूर्ण, संस्कार निर्मात्री और संघीय निष्ठा जगाने वाली चित्रकथा हो, उसका महत्त्व ही अलग है, "क्रान्तिकारी आचार्य भिक्षु" चित्रकथा हमारे संघीय इतिहास को उजागर करती है । संस्कार-निर्माण की दृष्टि से भी उसकी उपयोगिता असंदिग्ध है । इनमें वर्णित आचार्य भिक्षु के प्रेरक जीवन प्रसंग पाठकों के लिये बोधपाठ का काम करेंगे, ऐसी आशा की जा सकती है।

मुनि सुमेर (लाडनूं) इतिहास वेत्ता तो है ही, वह आज की भाषा में आज के तरीके से इतिहास लेखन के मर्म को भी पहचानता है । उसकी संघनिष्ठा और समाज में संघीय संस्कार भरने का कौशल बेजोड़ है । कलकत्ता महानगर का पंचवर्षीय प्रवास इसका साक्षी है । अहमदाबाद में भी वह सुनियोजित रूप में सतत काम कर रहा है । अन्यान्य कार्यों के साथ संघ के लिये उपयोगी साहित्य चित्रकथा के निर्माण का सिलसिला सिद्ध करता है कि वह समय-नियोजन की कला में भी निष्णात है ।

विशेष उद्देश्य के साथ लिखी गई ये चित्रकथाएं पाठकों के आकर्षण को बनाये रखती हुई बच्चों के संस्कार निर्माण में उपयोगी बने, यही मंगल भावना है।

२४ जनवरी, १९९७

गणाधिपति तुलसी
आचार्य महाप्रज्ञ